आन का मान

उत्तर प्रदेश

सरकार द्वारा पुरस्कृत

नाटक

दुर्गादास राठौर के

जीवन पर

आधारित

श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी'

द्वितीय संस्करण ● संवत् २०२१ विक्रम

प्रकाशक :
कौशाम्बी प्रकाशन
दारागंज, इलाहाबाद—६

मूल्य :
दो रुपये

मुद्रक :
सरयू प्रसाद पाण्डेय
नागरी प्रेस, दारागंज, इलाहाबाद

प्रवेश

पिछले एक वर्ष से मैं कोई नया नाटक अपने प्रेमी पाठकों को नहीं दे सका, मुझे बहुत खेद है। इसका कारण मेरे जीवन की अस्त-व्यस्त परिस्थितियाँ रही हैं। साहित्य-सृजन भारत के साहित्यकारों के लिए कितनी कठिन साधना है इसे केवल भुक्तभोगी ही जानते हैं। विशेष रूप से वे साहित्यकार, जो केवल अपने साहित्य में ही विशेष प्रकार के आदर्शों का प्रतिपादन कर अपने कर्त्तव्य की इति श्री नहीं मान लेते बल्कि उन्हें अपने जीवन में भी उतारने का यत्न करते हैं। उन्हें बड़ी कठिनाइयों में से गुजरना पड़ता है। मेरा दुर्भाग्य रहा है कि जो आदर्श अथवा जो सपने अपने साहित्य में देता रहा हूँ, अपने जीवन को उनके अनुरूप बनाने का प्रयास भी करता हूँ, फलतः मुझे संसार से लड़ना पड़ता है। शक्ति मेरी सीमित है किन्तु हठ अपरिमित, अतः फँस जाती है मेरी नैया भँवर में, बहुत कठिन होता है जीवन की नैया को भँवर से बाहर निकालना—तब रुक जाती है कलम की गति। लेकिन हार मान बैठना मेरे स्वभाव में नहीं है। इस समय भी मैं प्राणलेवा परिस्थितियों में हूँ फिर भी अपने प्रेमी पाठकों के सम्मुख यह नाटक लेकर प्रस्तुत हो रहा हूँ।

राजस्थान के मुगल कालीन इतिहास में दो वीर पुरुषों के नाम सदा के लिए अमर हो गये हैं—वे नाम हैं महाराणा प्रताप और वीरवर दुर्गादास राठौर। इन दोनों वीरों का सम्पूर्ण जीवन मुगल-साम्राज्य जैसी

साधन और शक्ति से सम्पन्न सत्ता से अनवरत युद्ध करते हुए बीता था। प्रत्येक प्रकार के कष्ट इन्होंने सहे लेकिन शत्रु के सम्मुख माथा नहीं टेका। अपने साहस, निर्भयता और रण-कौशल से विपक्ष की विशाल वाहिनियों के ये छक्के छुड़ाते रहे। इन दोनों वीरों में से दुर्गादास का व्यक्तित्व थोड़ा भिन्न है। प्रताप मेवाड़ की राजगद्दी के स्वामी थे, उनका युद्ध था अपने राज्य की स्वाधीनता की रक्षा के लिए किन्तु दुर्गादास स्वयं राजा नहीं थे। वह तो मारवाड़ के राठौर राजवंश के एक सेवक थे, अपने अन्नदाता स्वर्गीय जसवंत सिंह के नवजात शिशु को दिल्ली से हज़ारों की संख्या-वाली मुगल सेना के घेरे से अपने मुट्ठीभर साथियों के बल पर कैसे वह बचा ले गये, किस प्रकार उस शिशु को बादशाह औरंगजेब की क्रूर आँखों से बचा कर रखा और किस प्रकार उसे फिर मारवाड़ की राजगद्दी पर बैठाने के लिए बिखरी हुई राठौर शक्ति को संगठित कर वह मुग़ल-साम्राज्य से लोहा लेते रहे, किस प्रकार उन्होंने औरंगजेब के पुत्र को अपने पक्ष में मिलाकर राजनीतिक कुशलता का परिचय दिया, इन तथ्यों का विवरण इतिहास में प्राप्त होता है। मैंने अपने इस नाटक में दुर्गादास के जीवन के संध्याकाल की एक झाँकी दी है।

रणबंका दुर्गादास राठौर का चित्र भारत के साहित्य में—इतिहास के अतिरिक्त कविता, कहानी, नाटक और उपन्यास आदि विविध विधाओं में प्राप्त होता है किन्तु उनकी महत्ता के एक पहलू पर जैसा चाहिए वैसा प्रकाश नहीं पड़ा, ऐसा मुझे प्रतीत हुआ, इसलिए मुझे यह नाटक लिखने की आवश्यकता जान पड़ी। दुर्गादास तलवार के धनी तो थे ही लेकिन साथ ही वह ऊँचे दर्जे के मानव थे। उनमें जो मानवता थी, जो उदारता

थी, उनके पास जो एक स्नेह और सहानुभूति से भरा हुआ हृदय था, उसी का परिचय मैंने इस नाटक में दिया है।

वह जिस प्रकार दिल्ली से, ठीक औरंगजेब की नाक के नीचे से नवजात शिशु राजकुमार अजीतसिंह को मारवाड़ ले गये, यह मनुष्यों को चकित कर देने वाली घटना है, इसमें संदेह नहीं। लेकिन औरंगजेब का पुत्र अकबर इनके पक्ष में आ जाता है और राजपूत सेना अकबर के साथ मिलकर अजमेर में औरंगजेब से निर्णायक युद्ध करने जाती है और औरंगजेब की एक चाल सारे राजपूतों में अकबर के प्रति अविश्वास की भावना उत्पन्न कर देती है, फलस्वरूप सारे राजपूत उसका साथ छोड़ जाते हैं तब भी दुर्गादास अपने मित्र का साथ नहीं छोड़ते, यह घटना पहली घटना से भी अधिक प्रशंसनीय है। वह अकबर को दक्षिण में मराठा छत्रपति संभाजी के पास ले जाते हैं जिससे राजपूत, मराठे और अकबर की शक्तियों का सम्मिलित प्रयास औरंगजेब की संकीर्णता-पूर्ण नीति के विरुद्ध लगाने का कोई उपाय बन सके। दुर्भाग्य से यह मनोरथ सफल नहीं हुआ क्योंकि न तो संभाजी शिवाजी की भाँति दूरदर्शी थे, न राजपूत दुर्गादास की भाँति विश्वासी। उन्हें अकबर को औरंगजेब के हिंसक हाथों से बचाने के लिए ईरान भेजना पड़ा।

इससे भी अधिक महत्त्व का कार्य दुर्गादास ने एक और किया था। अकबर अपनी नवजात पुत्री सफीयतुन्निसा और शाहजादे बुलंद अख्तर को मारवाड़ में ही छोड़ गया था। इन बच्चों को दुर्गादास ने अपने बच्चों की तरह पाला, इन्हें मुस्लिम-संस्कृति के अनुसार शिक्षा दी। जब शाहजादी विवाह करने योग्य आयु की हुई तो औरंगजेब को उसे प्राप्त करने की

चिंता हुई, क्योंकि अब अजीतसिंह भी जवान हो चुके थे, उसे भय था कि अजीतसिंह के हाथों में मुगलशाहजादी का सम्मान सुरक्षित नहीं है। दुर्गादास ने देखा कि सचमुच औरंगजेब की आशंका निर्मूल नहीं है। जिस अजीतसिंह के लिए वर्षों से वह मुगलों की अपरिमित शक्ति से लड़ते आ रहे थे, उसी अजीतसिंह के कोप-भाजन बनकर भी उन्होंने शाहजादी को औरंगजेब के हाथ में सौंप दिया। अजीतसिंह ने कुपित होकर अपने स्वामी और देश के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन देनेवाले दुर्गादास को निर्वासित कर दिया। अपने त्याग और तप का यह अपमान उन्होंने हँसते हुए सह लिया। यह उनकी मानवता का उज्ज्वलतम रूप था। मेरे इस नाटक में उनके इसी उज्ज्वलतम रूप का चित्रण है।

प्रसंगवश नाटक में मारवाड़ और औरंगजेब के दीर्घ अवधि तक चलनेवाले संघर्ष और औरंगजेब की भी जीवन-व्यापी गति विधियों की चर्चा हो गयी है। लेकिन इस नाटक का घटना-काल केवल एक वर्ष का है। इसी समय में औरंगजेब की शाहजादी सफीयतुन्निसा और शाहजादे बुलंद अख्तर के लिए चिंता, उन्हें पाने के उसके प्रयत्न, दुर्गादास को उन्हें औरंगजेब को सौंप दूँ या नहीं—इस सम्बन्ध में अन्तर्द्वंद्व और उन्हें औरंगजेब के पास न भेजने देने के अजीतसिंह के निश्चय के विरुद्ध उनका संघर्ष आदि घटनाएँ घटित हुईं। यही कथानक का तानाबाना है।

एक बात मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि दुर्गादास का चरित्र-चित्रण करना मात्र इस नाटक का उद्देश्य नहीं है। औरंगजेब की संकीर्ण सांप्रदायिकता एवं साम्राज्य-विस्तार की नीति ने राजस्थान, दक्षिण और भारत के विविध प्रदेशों में युद्ध की जो भयानक ज्वाला भड़का दी थी

उससे देश की जन-हानि के साथ ही सुख-समृद्धि, खेतीबारी, व्यवसाय, कला-कौशल आदि सब का किस प्रकार विनाश हुआ इसकी तस्वीर भी मैंने खींची है। पाठकों के मन में युद्ध-विरोधी संस्कार पैदा करना भी मेरा एक उद्देश्य इसमें रहा है। भारतीय समाज में जाति-पाँति जन्य जो दुर्बलता है उसकी तरफ भी मैंने इशारा किया है और सांप्रदायिक वैमनस्य को दूर कर सारे धर्मों के मानने वालों में एकता स्थापित करने की आवश्यकता पर भी मैंने जोर दिया है।

नाटक में कुल तीन अंक हैं। अंकों को दृश्यों में विभाजित नहीं किया गया है, अर्थात् कुल मिलाकर तीन ही दृश्य हैं। अभिनय करने में इससे सहूलियत रहेगी। मुसलमान पात्रों की भाषा उर्दू नहीं रखी है क्योंकि मुसलमान पात्रों की संख्या इसमें काफी है; अगर उनकी भाषा उर्दू रखता तो नाटक हिन्दी भाषा का न रहता।

मुझे विश्वास है कि मेरे पाठकों ने जिस प्रकार मेरे अन्य नाटकों को पसन्द कर मुझे प्रोत्साहित किया है उसी प्रकार इस नाटक को भी पसन्द करेंगे और मुझे साहित्य-सेवा करते रहने का बल प्रदान करेंगे।

इन्दौर
२६ जनवरी १९६२

हरिकृष्ण 'प्रेमी'

पात्र-सूची

दुर्गादास	मारवाड़ का सेनानायक
औरंगजेब	भारत का मुगल-सम्राट्
अजीतसिंह	मारवाड़ का महाराजा
बुलंद अख़्तर	औरंगजेब के पुत्र अकबर का पुत्र
शुजाअत खाँ	मारवाड़ का मुगल सूबेदार
मुकुन्ददास खीची	मारवाड़ का एक सेनानायक
कासिम खाँ	दुर्गादास का एक मुसलमान अनुचर
ईश्वरदास	औरंगजेब का दूत
सफीयतुन्निसा	औरंगजेब के पुत्र अकबर की पुत्री
जीनतुन्निसा	औरंगजेब की एक पुत्री
मेहरुन्निसा	औरंगजेब की एक पुत्री

गौण पात्र

एक दासी (**मुसलमान**) और पालकी उठानेवाले चार कहार

पहला अंक

[समय—रात का पहला प्रहर। मरुभूमि का रेतीला मैदान। मैदान में दो-तीन शिला-खंड पड़े हैं। रंगमंच पर इस प्रकार का प्रकाश किया जाये जो दूधिया चाँदनी का आभास दे। जिस समय परदा उठता है उस समय रंगमंच खाली है लेकिन कुछ क्षणों के बाद अकबर द्वितीय (औरंगजेब का चतुर्थ पुत्र) का पुत्र बुलंद अख्तर और पुत्री सफीयतुन्निसा एक ओर से प्रवेश करते हैं। बुलंद अख्तर लगभग उन्नीस वर्ष का युवक है। यद्यपि वह मुगल शाहजादा है लेकिन इस समय साधारण मुसलमानों में पहनी जानेवाली पोशाक पहने हुए है कमर में तलवार बांधे है। उसका रंग गोरा है, नाक नुकीली, आँखें बड़ी और रोबदार हैं लेकिन उदासी को छाया लिए हुये; चेहरे पर दाढ़ी-मूछों ने अभी आना ही शुरू किया है, शरीर गठीला है न अधिक मोटा न अधिक पतला और कद लम्बा है। सफीयतुन्निसा लगभग सतरह वर्ष की युवती है। मुगल शाहजादियाँ जिस प्रकार के महीन जरीदार और बहुमूल्य वस्त्र पहनती रही हैं वैसे ही वह पहने हुए है; उसकी ओढ़नी काले रंग की है जो उसके गोरे रंग पर खूब फबती है। भाई की भाँति ही नाक नुकीली, आँखें बड़ी किन्तु उदासी की छाया लिये हुए, कद लम्बा किन्तु भाई से कुछ कम है, अंगों में आभूषण कम किन्तु रत्न-जटित और बहुमूल्य हैं।]

सफीयतुन्निसा — भाई जान, आप दिल्ली के तख्ते ताऊस * पर बैठेंगे तब भी अपना नाम बुलंद अख्तर ही रहने देंगे या कुछ और रखेंगे।

बुलंद अख्तर — क्या मतलब तेरा बहन सफीयतुन्निसा ?

सफीयतुन्निसा — बादशाह जहाँगीर का नाम था सलीम, लेकिन जब वह सिंहासन पर बैठे तो उन्होंने अपना नाम रखा नुरुद्दीन मुहम्मद जहाँगीर बादशाह गाजी।

बुलंद अख्तर — आप रे बाप इतना बड़ा नाम !

सफीयतुन्निसा — बड़ा नाम रखने से आदमी बड़ा हो जाता है। बादशाह शाहजहाँ का नाम था खुर्रम, उन्होंने अपना नाम रखा—अबुल मुजफ्फर शहाबुद्दीन मुहम्मद शाहजहाँ। और अपने बाबाजान पहले केवल औरंगजेब थे लेकिन जब बादशाह हुए तो कहलाने लगे अब्दुल मुहीउद्दीन मुहम्मद औरंगजेब बहादुर आलमगीर पातशाह गाजी और अब तो जिंदापीर भी उनके नाम के साथ जुड़ गया है।

बुलंद अख्तर — ज्यों-ज्यों नाम बड़े होते गये त्यों-त्यों काम खोटे होते गये।

सफीयतुन्निसा — सो कैसे ?

बुलंद अख्तर — देखो न सम्राट् जहाँगीर जब युवराज थे तब उन्होंने सिर्फ एक बार अपने पिता से विद्रोह किया—अपने आपको सम्राट् घोषित भी कर दिया था—लेकिन बाद में माफी भी माँग ली। सुबह का भूला शाम को घर आ जाये तो उसे भूला नहीं कहना चाहिए।

सफीयतुन्निसा — उन्होंने अपने किसी भाई की हत्या नहीं की।

बुलंद अख्तर — लेकिन इसमें उनकी क्या तारीफ उनका कोई भाई ही न था। फिर भी वह अपने हाथ खून से रँगे बिना न रहे। उन्होंने

---

* मोर की शक्ल वाला राजसिंहासन।

सम्राट् अकबर के प्रिय साथी अबुलफजल का बध करा डाला था।

सफीयतुन्निसा बादशाहत की लालच मनुष्य को राक्षस बना देती है।

बुलंद अख्तर इसमें क्या सन्देह ? बादशाह शाहजहाँ अपने पिता जहाँगीर से एक कदम और आगे बढ़ गये। उन्होंने अपने पिता के विरुद्ध विद्रोह तो किया ही जिसमें वह सफल न हो सके, या यों कहो पिता-पुत्र की मर्यादा को लाँघने का साहस न कर सके, लेकिन साथ ही उनके देहावसान के बाद अपने भाई भतीजों को मौत के घाट उतार कर खून की होली खेलते हुए वह सिंहासन पर बैठे।

सफीयतन्निसा लेकिन बाबा जान बादशाह औरंगजेब जिंदापीर अपने सभी पूर्वजों से बाजी मार ले गये, उन्होंने अपने मस्तक पर राजमुकुट रखने के लिए अपने पिता को बुढ़ापे में बंदी बनाया, भाइयों को मौत के घाट उतारा और इतना ही नहीं अपनी प्रभुता को सुरक्षित रखने के लिए अपने पुत्र को मृत्यु का ग्रास बनाने और पुत्री को कारागार में बंद रखने में उन्हें संकोच नहीं हुआ। उन्होंने अपने सबसे बड़े पुत्र मुहम्मद सुलतान को ग्वालियर के गढ़ में बंदी बना कर रखा और धीरे-धीरे अफीम का पानी पिला-पिलाकर उसे मार डाला। मुहम्मद सुलतान से छोटे मुहम्मद मुअज्जम भी उनके क्रोध से न बच सके; उन्हें भी दीर्घ अवधि तक बंदीगृह में रहना पड़ा। फूफीजान जेबुन्निसा बेगम को भी उन्होंने सलीमगढ़ में बंदी बना रखा है। अब्बाजान भाग कर ईरान चले गये, नहीं तो उनको भी बाबाजान मौत के घाट उतार कर ही रहते।

बुलंद अख्तर लेकिन बहन यह बताओ, अगर अब्बाजान हिन्दुस्तान के

बादशाह होते और मैं उनसे विद्रोह करता तो वह मेरे साथ कैसा व्यवहार करते ?

सफीयतुन्निसा तुम्हें लड्डू खाने को देते।

बुलंद अख्तर जिनमें जहर होता। असल में प्रत्येक व्यक्ति अपने आपको प्यार करता है। निर्धन लोग अपनी संतान से इसलिए प्यार करते हैं कि वे समझते हैं, बड़े होने पर उनको उनसे सहारा मिलेगा। अगर वे सहारा न देकर बाप को लाठियों से पीटने लगे तब भी क्या बाप उनको प्यार कर सकेगा ? अब्बाजान ने बाबाजान के मस्तक से राजमुकुट छीनना चाहा था। ऐसी भी क्या जल्दी थी उन्हें सम्राट् बनने की ?

[दुर्गादास का प्रवेश। दुर्गादास की आयु लगभग सत्तर वर्ष की है। वह राजपूती वेश में हैं। कद लम्बा, रंग गोरा, आँखें शेर की आँखों की तरह चमकनेवाली, लंबे हाथ, चौड़ी छाती, सफेद दाढ़ी मूछें। ढाल-तलवार बाँधे हुए।]

दुर्गादास नहीं उन्हें सम्राट् बनने की जल्दी नहीं थी शाहजादा हुजूर ! उन्हें तो हमने बाध्य किया था—

बुलंद अख्तर पिता के विरुद्ध तलवार उठाने के लिए।

दुर्गादास पिता और पुत्र के नाते से भी बड़ा नाता है—मानवता का। मानव का मानव के साथ जो नाता है—वह स्वार्थ का नाता नहीं है शाहजादा हुजूर, इसलिए वह पवित्र है। वह सब नातों से बड़ा है। सम्राट् औरंगजेब ने इस नाते को नहीं समझा। उन्होंने इंसान के जीवन का कोई मूल्य नहीं आँका। उन्होंने हिन्दू और मुसलमानों के बीच धर्म के नाम पर दीवार खड़ी कर दी। सम्राट् अकबर के समय से जो भाई-भाई की तरह

प्रेम-पूर्वक एक दूसरे के सुख-दुःखों के भागीदार बनकर रहते आये थे वे आज एक-दूसरे के खून के प्यासे हो गये हैं। सारे देश में रक्त की नदियाँ बह रही हैं। जिस व्यक्ति की भयानक करतूतों से जमीन और आसमान हा हाकार कर उठे हैं उसके विरुद्ध तलवार न उठाना ही पाप है।

सफ़ीयतुन्निसा आप बहुत हद तक ठीक कहते हैं वीरवर दुर्गादास ! फिर भी मुझे ऐसा जान पड़ता है कि हिन्दुस्तान में जो कुछ हो रहा है उसमें कहीं बहुत बड़ी भूल है—और होती चली जा रही है। सम्राट् औरंगजेब इस्लाम के प्रसार के लिए ही हिन्दुस्तान में खून की नदियाँ बहा रहे हैं, यह मैं नहीं मानती।

दुर्गादास तुम ठीक ही सोचती हो शाहजादी सफीयतुन्निसा ! सम्राट् औरंगजेब ने अपनी महत्त्वाकांक्षाओं को – साम्राज्य-विस्तार की लालसा को, सार्वभौम प्रभुता-प्राप्ति की इच्छा को धर्म-प्रेम का चोगा पहनाया है। धोखा, छल-प्रपंच, हिंसा और अत्याचार की नींव पर उनकी आकांक्षाओं का महल खड़ा है। हमें खेद है तो इस बात का कि जिन मुगल-साम्राज्य को हमने अपना खून सींच कर विस्तृत और बलवान बनाया है उसी के विरुद्ध हमें तलवार उठानी पड़ी है।

बुलंद अख्तर लेकिन क्या बिना तलवार उठाये काम नहीं चल सकता।

दुर्गादास तलवार से काम लेना मानव का स्वाभाविक धर्म नहीं है शाहजादा हुजूर ! राजपूतों की तलवार सदा सत्य, न्याय, स्वाभिमान और स्वदेश की संरक्षक होकर रही है। भारत ने कभी अपनी सीमा के बाहर जाकर साम्राज्य-विस्तार के लिए तलवार नहीं उठायी। अगर वह बाहर गया है तो ज्ञान का दीपक लेकर ही गया है। उसने किसी को दास बनाना नहीं चाहा—हाँ भाई अवश्य बनाना चाहा है।

बुलंद अख्तर तो क्या आप हमें भी अपना भाई मानते हैं—हमसे मेरा मतलब सम्राट् औरंगजेब जैसे व्यक्ति से भी है।

दुर्गादास क्यों नहीं शाहजादा हुजूर ? एक दिन था जब मारवाड़ के राठौरों, हाड़ाओं एवं अन्य राजपूतों की तलवारें उस समय के शाहजादा औरंगजेब का रास्ता रोकने के लिए उज्जैन के पास म्यान के बाहर निकली थीं, क्योंकि औरंगजेब भारत के प्रिय सम्राट् शाहजहाँ के मस्तक से राजमुकुट छीनने और सच्चे अर्थों में मानव, सब जातियों और सब धर्मों को बराबर समझने वाले युवराज दाराशिकोह की जान लेने के लिए आगे बढ़ रहे थे। फिर सामूगढ़ के युद्ध में बूँदी के महाराज छत्र-साल हाड़ा तथा दूसरे हजारों राजपूतों ने अपने प्राण इसलिए लुटाये कि वह सम्राट् शाहजहाँ को अपना पिता मानते थे। दारा को अपना सगा भाई समझते थे।

सफीयतुन्निसा और औरंगजेब को अपना कट्टर शत्रु।

दुर्गादास नहीं शाहजादा औरंगजेब भी तो हमारे पिता-तुल्य सम्राट् शाहजहाँ के पुत्र हैं। व्यक्तिगत रूप से उनसे राजपूतों की कोई शत्रुता नहीं थी, न है। उज्जैन के पास धरमत की लड़ाई के पूर्व हमारे महाराजा वीर-शिरोमणि जसवन्त सिंह जी ने औरंगजेब को समझा-बुझाकर वापस भेज देने का ही यत्न किया था—बाद में युद्ध में भी वह यह सावधानी बरत रहे थे कि सम्राट् शाहजहाँ के किसी पुत्र को जान से हाथ न धोना पड़े। वह औरंगजेब या मुराद को जान से नहीं मारना चाहते थे—केवल उनका पथ अपनी तलवारों की दीवार से अवरुद्ध करना चाहते थे और वह अपने मनोरथ में सफल भी हो जाते लेकिन तब औरंगजेब ने धर्म का नाम लेकर शाही सेना के मुस्लिम भाग को तोड़ लिया और महाराजा का प्रयत्न विफल हो गया।

सफीयतुन्निसा — और कदाचित् तभी से हिन्दुस्तान में दुर्भाग्य के बादल घिर आये।

दुर्गादास — हाँ, तभी से भारत के आकाश में दुर्भाग्य के बादल घिरे। हत्याओं और षड्यंत्रों का ऐसा चक्र चला जिससे मानवता चीत्कार कर उठी। मुराद को किसी तरह औरंगजेब ने धोखा देकर बन्दी बनाया और मौत के घाट उतारा, शुजा का क्या हुआ यह सब तुम्हें पता है, सारे भारत को पता है। सबसे करुण-दृश्य तो भारत के हृदय-सम्राट् दाराशिकोह का अन्त था। जिस दिल्ली में वह बड़ी शान से निकला करते थे उसी में उन्हें एक मैली-कुचैली छोटी-सी हथिनी पर बैठाया गया, उनकी बगल में उनका पुत्र सिपरसिकोह था जो उस समय केवल चौदह वर्ष का था। उनके पीछे नंगी तलवार लिये बंदीगृह का भयानक अफसर गुलाम नजरबेग बैठा था। संसार के सबसे बड़े साम्राज्य का उत्तराधिकारी, भारत के जन-मन का सम्राट् फटे-मैले मोटे कपड़े पहने, काली-कलूटी पगडी सिर पर रखे, दिल्ली के रास्तों, गली-बाजारों में घुमाया गया।

सफीयतुन्निसा — बस-बस वीरवर दुर्गादास जी, और कुछ न कहिए मेरा कलेजा फटता है।

दुर्गादास — तुम्हारा कलेजा फटता है शाहजादी, लेकिन उनकी दशा का अनुमान करो जिन्होंने अपनी आँखों से यह दृश्य देखा है। किस प्रकार औरंगजेब ने न्याय का ढोंग किया, किस प्रकार काजियों ने दाराशिकोह को प्राणदंड देने का निर्णय घोषित किया, किस प्रकार जल्लाद ने उनका सर काटा—तुम्हारा सौभाग्य है कि तुम्हें यह सब देखने का अवसर नहीं मिला। इस घटना से सारा भारत आहत हो उठा था। यह करुण-दृश्य तुम्हारे

अब्बाजान ने उदारहृदय शाहजादा अकबर ने—देखा था तुम्हारी फूफीजान शाहजादी जेबुन्निसा ने देखा था, इसलिए मन ही मन वे अपने पिता से विद्रोह कर उठे हों तो आश्चर्य क्या है।

बुलंद अख्तर — आश्चर्य यही है कि लोग ऐसे दृश्य को निश्चेष्ट होकर देखते रहे। अब्बाजान का चुप रहना फिर भी स्वाभाविक कहा जा सकता है क्योंकि पिता और पुत्र का नाता सहज ही नहीं टूट जाता, लेकिन राजपूत राजाओं का तो उनसे कोई ऐसा नाता नहीं था। उनके खून ने उबाल नहीं खाया।

दुर्गादास — खून ने उबाल क्यों नहीं खाया—लेकिन विवेक ने शान्त कर दिया। माना कि औरंगजेब से उनका विशेष नाता नहीं था लेकिन मुगल-साम्राज्य से तो था। इस साम्राज्य के लिए राजपूतों ने बलख—बुखारा से लेकर बीजापुर—गोलकुंडा तक अपने मस्तकों के बीज बोये थे और हृदय का रक्त सींचा था तब जाकर इस विशाल साम्राज्य-रूपी महान् विटप को वर्तमान रूप प्राप्त हुआ था। इस विशाल विटप के धराशायी होने की कल्पना मात्र से राजपूतों का हृदय काँपता था; सम्राट् जहाँगीर की माता राजपूतनी थी, सम्राट् शाहजहाँ की माँ भी राजपूतनी थी, हम मुगल-साम्राज्य को जितना मुगलों का मानते हैं उतना ही अपना भी। हमसे जहाँ तक बना औरंगजेब से दिल्ली के सिंहासन की रक्षा करने का यत्न किया, किंतु जब वह अपने छल—प्रपंच और परस्पर में भेद-भाव उत्पन्न करने के ओछे हथियारों द्वारा सफल हो गये तो हमें शान्त हो जाना पड़ा।

बुलंद अख्तर — सम्भवत: अनुकूल अवसर की प्रतीक्षा में—

दुर्गादास — नहीं, इस आशा से कि जब धर्म का नकाब ओढ़कर औरंगजेब दिल्ली का सिंहासन पाने के मनोरथ में सफल हो गये तो साम्राज्य के हित के लिए वह अपना मार्ग बदलेंगे, इस नकाब की आवश्यकता नहीं अनुमान करेंगे। सम्राट् अकबर की चलायी हुई सब धर्मों में पारस्परिक स्नेह और उदारता बढ़ाने की नीति का ही वह अनुसरण करेंगे, लेकिन·········

सफीयतुन्निसा — ऐसी आशा करने वालों के हाथ निराशा ही लगी।

दुर्गादास — हाँ, उनके हाथ निराशा ही लगी। राजपूतों ने मुगल—सम्राट् औरंगजेब के साम्राज्य के लिए उसी प्रकार अपने शीश लुटाये, जिस प्रकार पहले लुटाते आये थे। उन्होंने अपना हित मुगल—साम्राज्य के हितों में तिरोहित कर दिया। अंबर के महाराजा जयसिंह ने महाराष्ट्र केशरी शिवाजी को, अपने स्वधर्मी को सम्राट् औरंगजेब के पास भेजने में संकोच नहीं किया। उन्हें आशा थी कि मराठों और मुगलों में मेल हो जायेगा लेकिन सम्राट् औरंगजेब ने राजपूत के वचन का मान नहीं किया। वह तो अच्छा हुआ कि भारत के सौभाग्य से शिवाजी बच निकले।

बुलंद अख्तर — संभवतः अंबर के युवराज रामसिंह की सहायता से।

दुर्गादास — हो सकता है युवराज रामसिंह ने अपने पिता के वचन का मान रखने के लिए शिवाजी को निकल भागने की योजना में सहायता की हो। खैर कुछ भी हो एक के बाद एक धोखा खाने पर भी राजपूत औरंगजेब का साथ देते रहे। हमारे मारवाड़ के महाराजा जसवंत सिंह ने पठानों का विद्रोह शान्त करने के यत्न में जमरूद में अपने प्राण गँवाए। इधर सम्राट्

औरंगजेब ने उनके एक मात्र जीवित पुत्र पृथ्वीसिंह की जान ले ली। वह मारवाड़ की गद्दी का कोई धनी नहीं छोड़ना चाहते थे, किन्तु मारवाड़ के पचास हजार राठौर योद्धा—एक बाप के बेटे—अपनी बपौती के लिए खून की होली खेलने के लिए प्रस्तुत थे।

सफीयतुन्निसा — और मारवाड़ के सौभाग्य से स्वर्गीय महाराजा जसवंतसिंह जी की रानियों ने लाहौर में दो पुत्रों को जन्म भी दिया।

दुर्गादास — मारवाड़ की गद्दी वैध उत्तराधिकारी से वंचित नहीं रही। और इस आशा से कि सम्राट् औरंगजेब स्वर्गीय महाराजा के किसी एक पुत्र को मारवाड़ का धनी स्वीकार कर लेंगे हम लोग लाहौर से दिल्ली आये लेकिन सम्राट् की प्रतिहिंसा तब भी शान्त नहीं हुई थी। उन्होंने दुधमुँहे राजकुमारों को हमसे माँगा। हम काले साँप का विश्वास कर सकते थे, औरंगजेब का नहीं। उन्होंने मुझे जर और जागीर का भी लोभ दिया कि मैं राजकुमारों को उन्हें सौप दूँ। सच्चा राजपूत बड़ी से बड़ी कीमत पर, स्वर्ग के सिंहासन के लोभ में भी अपने स्वामी से और अपने देश से द्रोह नहीं करता। दुर्गादास प्राण दे सकता था, स्वामी के साथ विश्वासघात नहीं।

बुलंद अख्तर — निश्चय ही आपकी स्वामिभक्ति, बहादुरी, साहस और दृढ़ता के सभी कायल हैं।

दुर्गादास — राजपूत के विषय में संसार क्या सोचता है इसकी वह चिंता नहीं करता। उसे यश मिले चाहे अपयश वह तो अपना धर्म-निभाता है। जिस दिन के लिए दुर्गादास और उसके साथियो ने मारवाड़ के धनी का नमक खाया था वह दिन तब आ पहुँचा जिस दिन हमारी दिल्ली की हवेली को हजारों की

संख्या में सम्राट् औरंगजेब की सेना ने घेर लिया। किसी तरह, कासिम खाँ को तो तुम जानते हो, जिन्हें सारा राजपूताना काका जी कहता है, उनकी सहायता से हमने दोनों शिशु राजकुमारों को राजस्थान की ओर रवाना कर दिया।

सफीयतुन्निसा अगर कासिम खाँ जी धोखा दे देते तो, आखिर वह भी मुसलमान हैं।

दुर्गादास मुसलमान तो तुम भी हो बेटी, मुसलमान तो तुम्हारे अब्बा भी हैं, सम्राट् शाहजहाँ, जहाँगीर, अकबर महान् सभी मुसलमान थे, मुसलमान तो सम्राट् हुमायूँ भी थे जिन्होंने चित्तौड़ की राजमाता कर्मवती की भेजी हुई राखी की लाज रखने के लिए अपने साम्राज्य को खतरे में डालना स्वीकार किया था। शाहजादी, मानवता सब धर्मों से ऊँचा धर्म है। मानवता पर मुझे विश्वास था, और है। सभी औरंगजेब नहीं हो सकते।

बुलंद अख्तर और कासिम खाँ सच्चे मनुष्य साबित हुए।

दुर्गादास हाँ, वह बड़ी कुशलता से राजकुमारों को खतरे से बाहर ले गये। एक राजकुमार का तो मार्ग में देहान्त हो गया, लेकिन अजीत सिंह बच गये। इधर हम लोगों की परीक्षा का समय आया। राजपूतानियों ने जौहर की ज्वाला में जीते जी जल कर स्वर्ग का मार्ग लिया। रह गयीं केवल अजीत सिंह जी की माता। उन्हें मारवाड़ के गाँव-गाँव में घूम-घूम कर स्वाधीनता के अखंड युद्ध में भाग लेने के लिए लोगों को तैयार जो करना था। उन्होंने मर्दाने सैनिक वस्त्र पहने, घोड़े पर सवार हुईं, हाथ में तलवार थामी, तब वह साक्षात् दुर्गा जान पड़ती थीं, इधर हम पाँच सौ राजपूत, उधर मुगल—साम्राज्य का विशाल

सैन्य-दल। हम लोग केसरिया बाना पहन कर निकले, प्राणों का मोह किसी को नहीं था, हम में से अधिकांश योद्धा मुगल सेना की फसल काटते हुए खेत रहे, लेकिन राजमाता, मैं और मेरे कुछ साथी पार निकल ही आये और राजस्थान में आकर स्वाधीनता के युद्ध की घोषणा की।

बुलंद अख्तर इस तरह आपको मुगल-साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए बाध्य कर दिया गया।

दुर्गादास यह विद्रोह नहीं था। यह तो आहत मानवता का आत्म-निवेदन था। बल्कि मैं तो कहूँगा—यह हमारे पापों का प्रायश्चित्त था। सम्राट् औरंगजेब के झंडे के नीचे हम जो बीसियों युद्धों में भाग लेकर उनकी महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के साधन बने रहे, इसका प्रतिकार तो प्रकृति को करना था। इसी समय सम्राट् औरंगजेब ने हिन्दुओं पर जजिया नामक दंड लगा दिया। अर्थात् हिन्दू होना भी एक अपराध बन गया। इसके पश्चात् केवल मारवाड़ ही नहीं सम्पूर्ण राजस्थान रूपी ज्वालामुखी ने अपना मुँह खोल दिया। युगों से दबी हुई ज्वाला पुनः प्रज्वलित हो उठी। उसी ज्वाला को शान्त करने के लिए तुम्हारे अब्बा यहाँ आये थे। उन्होंने अपने पिता के आज्ञाकारी पुत्र का धर्म निभाना चाहा, लेकिन मेवाड़ और मारवाड़ की सम्मिलित सेना ने उन्हें नाकों चने चबवा दिये।

सफीयतुन्निसा और हार खाकर उन्होंने आपसे मित्रता कर ली।

दुर्गादास नहीं बेटी, ऐसा तो नहीं कहना चाहिए। औरंगजेब जैसे हठी आदमी से सामना था। एक दो या दस-बीस भी हार-जीतों से इस युद्ध का परिणाम नहीं निकलना था। एक दो बार की तुम्हारे अब्बा की हार औरंगजेब की हार नहीं हो सकती थी।

इसे हम भी जानते थे और तुम्हारे अब्बा भी। उन्होंने हमसे मित्रता की तो केवल अपनी आत्मा की पुकार सुनकर। मुगल-सेना हमसे आमने-सामने के प्रत्यक्ष युद्ध में हारी या जीती—यह तो साधारण बात थी लेकिन युद्ध हो रहा था राजस्थान की भूमि पर। मुगल-सेना यहाँ के गाँवों में और खड़ी फसलों में आग लगा रही थी, औरतों और बच्चों को कत्ल कर रही थी। निरपराध लोगों के सर्वनाश ने तुम्हारे अब्बा के अन्तः-करण में सुप्त मानवता को जगाया। इस तरह वह हमारी तरफ झुके, हमारे हो गये। तब हमने उस मुगल-साम्राज्य का बल्कि यों कहो, उस भारतीय साम्राज्य का सपना देखा—जो सम्राट् अकबर का सपना था। बेटी, उन्हीं दिनों तुम्हारा जन्म हुआ था, तुम्हारे अब्बा ने नया सपना देखा था।

सफीयतुन्निसा लेकिन वह सपना पूरा तो नहीं हुआ। उस सपने की देन अभागी लड़की जरूर आपका बोझ बनी हुई है।

दुर्गादास नहीं बेटी, तुम बोझ नहीं हो। तुम तो पवित्र धरोहर हो। तुमको और शाहजादे को देख लेता हूँ तो मेरी बूढ़ी हड्डियों में भी जोश आ जाता है। भारत का दुर्भाग्य था कि सपना पूरा नहीं हुआ, तुम्हारे अब्बा शाहजादे अकबर का—बल्कि मैं उन्हें सम्राट् अकबर द्वितीय ही कहूँगा, क्योंकि मैंने अपने हाथ से उनका राजतिलक किया था, अपने रक्त से टीका लगाया था।

बुलंद अख्तर क्योंकि हम जितने ऊँचे सपने देख लेते हैं उतने ऊँचे हमारे दिल नहीं हैं।

दुर्गादास यही तो रोना है शाहजादे हुजूर। सम्राट् औरंगजेब की एक चाल ने हमारे सपनों का महल गिरा दिया। जब हमने तुम्हारे अब्बाजान को सम्राट् घोषित किया तब सम्राट् औरंगजेब

अजमेर में थे। हम अपनी सेना लेकर उनसे लोहा लेने—निर्णायक-युद्ध करने—अजमेर की ओर बढ़े। जब अजमेर के पास पहुँच कर हमने पड़ाव डाला तब सम्राट् औरंगजेब के पास सेना थोड़ी थी, और हमारी विजय निश्चित थी, लेकिन उन्होंने एक पत्र तुम्हारे अब्बा के नाम लिखा कि मुझे खुशी है कि तुम राजपूतों को जाल में फाँस कर यहाँ तक ले आये हो। अब राजपूत सेना पर आगे से मेरा और पीछे से तुम्हारा आक्रमण होगा तो इनमें से एक भी वापस नहीं जा पायेगा। पत्र लानेवाले को आदेश दिया गया था कि पत्र अकबर के पास न पहुँचाकर किसी राजपूत सरदार के हाथ में पहुँचाया जाये।

बुलंद अख्तर — यह तो आप मानेंगे ही कि युद्ध जीतने के लिए ताकत और हथियार ही पर्याप्त नहीं हैं, दिमाग भी चाहिए।

दुर्गादास — हाँ, कदाचित् दिमाग देवताओं की अपेक्षा राक्षसो के पास अधिक तेज है। खैर कुछ भी हो, राजपूतों के हाथ पत्र का पड़ना था कि संदेह की आँधी उठी। वे सभी तुम्हारे अब्बा का शिविर रात को ही छोड़कर नौ दो ग्यारह हो गये। उन्हें सचमुच ऐसा जान पड़ा कि तुम्हारे अब्बा उन्हें मृत्यु की कंदरा में खींच लाये थे। तुम्हारे अब्बा ने सुबह उठकर देखा तो राजपूती सेना का निशान तक न था। उन्हें अपने सपनों का महल ताश के घर सा गिरता हुआ दिखायी दिया। वह आश्चर्य और दुख से व्याकुल मेरे पास आये। उन्हें जब पत्र दिखाया गया तो उनकी आँखों में आँसू छलक आये। उनके मुँह से टूटे-फूटे शब्द निकले—"मैं भी चाचाजान मुराद की तरह अभागा हूँ, उन्हें भी धोखे से अब्बाजान ने मारा था और मुझे भी इस जालसाजी से मारा जा रहा है। मैदान में उनकी

तलवार से मेरा सर कटता तो मुझे खेद न होता।" तुम्हारे अब्बाजान के संतप्त हृदय से उच्चरित मार्मिक शब्दों को सुन कर मुझे विश्वास हो गया कि सचमुच धूर्तराज औरंगजेब ने गहरी चाल चली है।

बुलंद अख्तर — लेकिन राजपूतों को यह विश्वास नहीं हुआ।

दुर्गादास — हाँ, नहीं हुआ। जानते हो दूध का जला छाछ को भी फूंक-फूंक कर पीता है।

सफीयतुन्निसा — लेकिन आप तो दूध से जल कर भी गरम दूध को गले के नीचे उतारने को उतारू रहते हैं।

दुर्गादास — बेटी, धोखा देने से धोखा खाना अधिक अच्छा है। दुर्गादास ने धोखे की लड़ाई कभी नहीं लड़ी है। सत्य बात कहने में वह कभी नहीं चूका है। लोभ उसे गुलाम नहीं बना सका है, मृत्यु उसे डरा नहीं सकी है। उसे भरोसा था कि तुम्हारे अब्बा का साथ देकर उसे प्राण भी देने पड़े तब भी एक बाप के बेटे—पचास हजार राठौरों—में से जब तक एक भी जीवित हैं, मारवाड़ के धनी अजीत सिंह का बाल भी बाँका नहीं होने पायेगा। इसलिए उसने अपना भाग्य तुम्हारे अब्बाजान के साथ जोड़ दिया। और मारवाड़ के शिशु धनी अजीत सिंह जी को मारवाड़ की तलवारों की छाया में छोड़कर अपने थोड़े से साथियों के साथ तुम्हारे अब्बा को लेकर वह दक्षिण में महाराष्ट्र छत्रपति संभाजी के पास पहुँचा।

सफीयतुन्निसा — लेकिन आपका पीछा तो मुगल-सेना कर रही होगी, उससे बचकर आप कैसे संभाजी के पास तक पहुँचे?

दुर्गादास — कैसे पहुँचे यह तो हमीं जानते हैं; कितनी चढ़ती हुई नदियों को हमने पार किया, कितने घने जंगलों के बीच से हम

गुजरे, कितनी धूप और वर्षा अपने मस्तकों पर सही। कितनी बार मृत्यु हमारे सामने मुँह फाड़े हुए हमें दिखाई दी! कितने दिन और रात बिना खाये-पिये हम चलते ही रहे। मुझे अपने ऊपर तो दया नहीं आयी, लेकिन तुम्हारे अब्बा पर तरस जरूर आया। मखमली गद्दों से नीचे जो कभी पाँव नहीं रखते थे, जो युद्ध भी करते थे तो अपने डेरे पर बैठ कर ही युद्ध की शतरंज बिछाते थे, उन्हें मैंने जंगल-जंगल भटकाया। कई रातें बिना सोये घोड़े की पीठ पर ही बीत गयीं।

बुलंद अख्तर — विपत्तियाँ मनुष्य को बलवान बनाती हैं।

दुर्गादास — हाँ शाहजादे, मनुष्य को चाहिए कि मुसीबतों से मित्रता करता रहे। उन्हें आमन्त्रण देता रहे। हम राजस्थानी तो मुसीबतों की गोद में जन्म लेते हैं, मुसीबत की सेज पर अन्तिम निद्रा में सो जाते हैं। यहाँ की धरती अन्न देने में कंजूस है, हवा यहाँ बादलों को नहीं लाती। ऊपर से सूर्य आग बरसाता है, नीचे से बालू तपती है। तिस पर हमारे स्वाभिमान और स्वाधीनता-प्रेम को न सह सकनेवाले साम्राज्य-लोलुप व्यक्ति हमारा शिकार करने को घूमते हैं। विपत्तियाँ हमारी रोज की सहेलियाँ हैं। मौत से हम डरते नहीं हैं लेकिन तुम्हारे अब्बाजान के लिए तो यह नया अनुभव था।

सफीयतुन्निसा — लेकिन उन्होंने आपका साथ निभाया तो।

दुर्गादास — हाँ, बहुत वीरता से। आखिर उन्होंने बहादुर बाबरशाह के वंश में जन्म लिया है; घोड़े की पीठ ही जिनकी सेज रही, जो आदमी की ऊँचाई जितने हिम से अच्छादित मार्गों पर चलने में कभी नहीं सकुचाये, जो कभी सम्राट् तो कभी रास्ते के फकीर नजर आते थे, जिनके साहस का मार्ग न तो शत्रु

की तलवारें रोक सकीं, न ऊँचे पर्वत, न गहरी खाइयाँ। यहाँ आज उनके वंशजों को वैभव ने विलास-प्रिय बना दिया है। आज अपरिमित धन के वे स्वामी हैं, जिससे लाखों की संख्या में उनकी तरफ से संग्राम करनेवाले प्राप्त हो जाते हैं, फिर भी उनमें वह पूर्व तेज और साहस कभी-कभी जाग ही पड़ता है। कम से कम औरंगजेब में मैंने उसके दर्शन किये हैं।

बुलंद अख्तर जो व्यक्ति आपको शत्रु समझता है और जो वर्षों से आपकी जान का ग्राहक बना हुआ है, आप उसकी प्रशंसा करते हैं।

दुर्गादास शत्रुता आँखों का प्रकाश तो नहीं छीन लेती, शाहजादा हुजूर! मैंने उन्हें अपनी आँखों पैदल ही—केवल एक तलवार लेकर मतवाले हाथी से युद्ध करते देखा है। उस समय वह केवल पन्द्रह वर्ष के थे। पूत के लक्षण पालने में नजर आ जाते हैं। मैं तो उस समय उनसे भी छोटा था—लेकिन मुझे उनसे ईर्ष्या हुई थी। मैंने उन्हें युद्ध के मैदानों में—जब शत्रु की तोपें आग बरसा रही थीं—निश्चिन्तता से नमाज पढ़ते हुए देखा है। बड़ी से बड़ी विपत्ति में भी उन्होंने अपने मस्तिष्क का संतुलन नहीं खोया। उनके नेतृत्व में युद्ध करने में योद्धाओं को आनन्द आता है।

सफीयतुन्निसा इस समय तो आप बाबाजान की इस प्रकार प्रशंसा के पुल बाँध रहे हैं मानों वह आपके आत्मीय हों।

दुर्गादास मेरे मन में अनेक बार यह बात उठी है कि काश सम्राट् औरंगजेब भारत का हृदय जीतने का यत्न करते तो कितना अच्छा होता! भारत उनके सारे अपराधों को क्षमा कर देता।

तख्त पाने के लिए जो भी नृशंस कार्य उन्होंने किए उन्हें भुलाया जा सकता था—यदि वह मनुष्य और मनुष्य में भेद करने की नीति न अपनाते । उन्होंने हमारी भावनाओं पर आघात किया है—हमें हमारे ही घर में गुलाम बनाकर स्वयं स्वामी बनने का यत्न किया है—यही भारत स्वीकार नहीं कर सकता—नहीं करेगा ।

बुलंद अख्तर — लेकिन क्षमा कीजिए, आपके किए क्या हो सका ? आप तो अब्बाजान के राजमुकुट की—उस राजमुकुट की जिसे आपने स्वयं अपने हाथ से उनके मस्तक पर रखा था—रक्षा नहीं कर सके, बल्कि अब्बाजान को भागकर ईरान जाना पड़ा ।

दुर्गादास — मानता हूँ, शाहजादा हुजूर कि मैं—मैं क्यों कहूँ मुझे हम कहना चाहिए—औरंगजेब से जो लड़ाई है वह अकेले दुर्गादास की नहीं है—बल्कि भारत के प्रत्येक उस व्यक्ति की है जो मानवता पर विश्वास करता है—जो धर्म के नाम पर मनुष्यों के विभिन्न वर्गों—समुदायों में विभाजन को पाप मानता है—हाँ तो मैं कह रहा था कि हम अपनी मंजिल से अभी दूर हैं । फिर भी यह न समझना चाहिए कि भारत के साहस ने दम तोड़ दिया है ।

बुलंद अख्तर — दम तो नहीं तोड़ा है लेकिन वह मंजिल की तरफ प्रगति कर रहा है इसका आभास भी तो नहीं मिल रहा है ।

दुर्गादास — यह तो आकाश के नक्षत्र ही जानते हैं या वे आँखें देख सकती हैं जो अदृश्य आगत के पर्दे को चीरकर झाँक सकती हैं कि भारत के कदम किस ओर अग्रसर हो रहे हैं । भारत ने पाप किये हैं—तभी तो यहाँ औरंगजेब जन्म लेते हैं, तभी तो

यहाँ दाराशिकोह को कत्ल किया जाता है, तभी तो यहाँ शाहजहाँ को बूँद-बूँद पानी के लिए तरसाया जाता है। भारत का सब से बड़ा पाप है उसकी आपस की फूट। मैं महाराष्ट्र में गया था—मराठों, राजपूतों, भारत को अपना समझनेवाले मुसलमानों को एक करने के लिए। लेकिन किसने सुनी मेरी बात? सब अपनी-अपनी ढपली और अपना-अपना राग अलापते हैं। अन्याय से लड़ने का कोई योजनाबद्ध सम्मिलित प्रयास नहीं हो सका। इसलिए एक-एक करके प्रत्येक प्रयास के गले पर औरंगजेब की तलवार आघात कर रही है। संभा जी की आँखों का निकाला जाना और उसके बाद उनका वध किया जाना—मराठे देखते हैं, राजपूत देखते हैं, मुसलमान देखते हैं; संभा जी के मंत्री कवि कलश की जीभ कटते देखते हैं, एक उदासी से भरी हुई साँझ को, अकबर के जहाज को भारत की सीमा छोड़ते देखते हैं। अत्याचार के विरुद्ध जहाँ-तहाँ तलवारें उठती हैं, तलवारों से तलवारें भिड़ती हैं, खून की नदियाँ बहती हैं।

बुलंद अख्तर — लेकिन भारत का नक्शा नहीं बदलता—

दुर्गादास — नहीं बदलता—क्योंकि हमारे जीवन में नैतिकता नहीं है, ईमानदारी नहीं है, सच्ची वीरता नहीं है, मानवता नहीं है। हम बँटे हुए हैं विभिन्न राज्यों में, विभिन्न जातियों में, विभिन्न वंशों में, विभिन्न धर्मों में, हम एक मंदिर में भगवान् की पूजा नहीं कर सकते और दूसरे के मंदिर को सहन नहीं कर सकते—हम एक कूप से पानी नहीं भर सकते—हम एक जाजम पर भोजन नहीं कर सकते—तब प्रकृति बदला लेती है। अलाउद्दीन और औरंगजेब हमारे बीच आकर स्वाभिमान

को पैरों तले कुचलते हैं, तब कुचला हुआ मस्तक आततायी के चरणों के नीचे से झाँक कर देखता है--है किसी की आँखों में सहानुभूति के आँसू उसकी दुरवस्था पर ? लेकिन वह पाता है दशों दिशाओं में एक व्यापक उदासीनता—इस तरह एक के बाद एक स्वाभिमानी मस्तक को कुचल दिया जाता है ।

सफीयतुन्निसा तब क्या हिन्दुस्तान का कोई भविष्य नहीं है ?

दुर्गादास है क्यों नहीं ? लेकिन भारत का भविष्य राजाओं के हाथों में नहीं हैं । वह जन-साधारण में से जन्म लेनेवाले शिवाजी के हाथ में है, जन्म से ही राजा बनकर आनेवाले संभा जी के हाथ में नहीं । वह है स्वत्वों से वंचित छत्रसाल में । वह है उन किसानों के हाथों में, युद्ध की विभीषिका ने जिनकी खड़ी फ़सलों को जला डाला है—वह है उन घरबार से वंचित दाने-दाने से मोहताज व्यक्तियों के हाथों में, जिनके घरों को पेट की ज्वाला शान्त करने के लिए अपना ईमान बेचनेवाले सैनिकों ने जला डाला है ।

सफीयतुन्निसा वह है पराई आग में जलनेवाले दुर्गादास के हाथों में, देश से पहले अपने मस्तक के राजमुकुट की रक्षा के लिए प्रयत्नशील महाराज जसवंत सिंह के हाथ में नहीं ।

दुर्गादास हः हः हः परायी आग में जलनेवाले दुर्गादास ! यह क्या कहा तुमने शाहजादी ! पड़ोसी के घर में लगी हुई आग को हम अपने घर में लगी हुई आग समझ कर बुझाने का यत्न नहीं करेंगे तो हमारा घर भी जलेगा । दुर्गादास को देवता समझने की भूल न करो शाहजादी ! दुर्गादास एक साधारण सैनिक है ।

[इसी समय कहीं से तुरही बजने की ध्वनि सुनायी देती है ।]

सफीयतुन्निसा — इस समय यह तुरही की आवाज !

दुर्गादास — इस आवाज से आप अपरिचित नहीं हैं। संभवत: मुगल-सेना हमारी खोज करती हुई इधर निकल आयी है और हमारे गुप्तचरों ने हमें सावधान करने के लिए तुरही बजायी है। मुझे जाना होगा इसी समय आप लोगों की सुरक्षा की व्यवस्था करने। अच्छा मैं जाता हूँ। आप लोग भी डेरे पर चलें।

[दुर्गादास का प्रस्थान]

बुलंद अख्तर — चलो बहन ! हम भी चलें।

सफीयतुन्निसा — नहीं, इस चाँदनी रात का आनन्द छोड़कर यहाँ से नहीं जाऊँगी।

बुलंद अख्तर — क्या करोगी ?

सफीयतुन्निसा — क्या करूँगी ? कुछ नहीं, उस मुसकराते हुए चाँद को देखूँगी और गीत गाऊँगी। आकाश के नक्षत्रों को अपनी व्यथा सुनाऊँगी। कम से कम उनका हृदय......

बुलंद अख्तर — औरतें पागल होती हैं, उन्हें युद्ध के समय गाना सूझता है।

सफीयतुन्निसा — तब क्या अपने डेरे पर पहुँच कर एकांत में बैठ कर आँसू बहाऊँ ? आँसुओं से अगर खून की वर्षा होनी बन्द हो सकती तो मैं अपने आँसुओं से सारी पृथ्वी को भर देती, भाईजान ! संसार में आँसुओं का अभाव नहीं है। राजस्थान की धरती का कौन-सा कोना है जिसे आँसुओं ने सींचा नहीं है, और कौन सा कोना है जिस पर खून की वर्षा नहीं हुई—लेकिन फिर भी आँसू भी बह रहे हैं—खून भी बह रहा है। भाईजान, इसे रोकना क्या औरतों के वश में है ?

बुलंद अख्तर — नहीं तो क्या पुरुषों के वश में है ?

सफीयतुन्निसा — हाँ, पुरुषों के वश में है, क्योंकि उनके हाथ में तलवारें हैं— जो खून की नदियाँ बहती हैं। पुरुष अगर अपनी तलवारें म्यान के भीतर रख सकें तो न खून की वर्षा हो—न आँसुओं की।

बुलंद अख्तर — लेकिन जिस पुरुष का अपने ऊपर वश नहीं है वह अपनी तलवार पर काबू कैसे रख सकता है ?

सफीयतुन्निसा — लेकिन मैं पूछती हूँ पुरुष तलवार बाँधता ही क्यों है ?

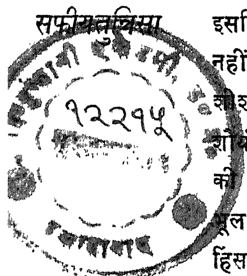
बुलंद अख्तर — तो क्या वह तुम्हारी तरह चूड़ियाँ पहन कर बैठ जाये ? बहन, जंगलों में ही हिंसक पशु नहीं रहते, बस्तियों में भी वे बसते हैं—भले ही इंसान की खाल ओढ़े रहते हैं, इंसान का चेहरा लगाये रहते हैं, लेकिन इंसान का हृदय नहीं रखते। ये जन्तु सिर्फ तलवार की भाषा समझते हैं।

सफीयतुन्निसा — हः हः हः और इनके गले कोई बात उतारने के लिए इनका गला ही काट देना आवश्यक हो जाता है। लेकिन भाईजान, गला काट देने से ही इंसान को पशु से इंसान नहीं बनाया जा सकता। जिनके गले कटते हैं उनकी सन्तान भी प्रतिशोध की भावना से पागल होकर पशु बन जाती है। वह गला काटने वालों का गला काटना चाहती है और पीढ़ियों तक गला काटने का क्रम चलता रहता है।

बुलंद अख्तर — तो तुम्हारी सम्मति में संसार भर की तलवारें छीनकर उनके टुकड़े-टुकड़े करके फेंक देनी चाहिएं। लेकिन बहन, तलवारों को छीनने के लिए भी तलवार चाहिए।

सफीयतुन्निसा — लेकिन भाईजान, तलवार को प्यार से भी छीना जा सकता है। आपने हिन्दुस्तान का इतिहास तो पढ़ा है—एक बार सम्राट् अशोक ने कलिंगके युद्ध से द्रवीभूत होकर अपनी तलवार फेंक दी थी और फिर प्यार से सबकी तलवारें छीन ली थीं। अशोक का साम्राज्य बाबाजान के सम्राज्य से छोटा नहीं था।

बुलंद अख्तर — लेकिन क्या सम्राट् औरंगजेब को अशोक बनाया जा सकता है? नहीं बहन, नहीं। यह मुझे सम्भव नहीं जान पड़ता। इतिहास के कुछ पहले के ही पृष्ठों को खोलकर देखो। बाबा नानक ने प्रेम का सन्देश देकर हिन्दू-मुसलमानों की एक दूसरे पर तनी हुई तलवारों को रोकना चाहा था—अब उनके शिष्य, उनके अनुगामी तलवार बाँधने लगे हैं। किसलिए?



सफीयतुन्निसा — इसलिए कि उनके अनुयायियों में एक भी बाबा नानक सा सन्त नहीं हुआ। उनके जैसा विशाल हृदयवाला, उनके जैसा वीर। शीश काटने की अपेक्षा हँसते-हँसते शीश कटाने में अधिक शौर्य है भाईजान! मैं तो कहूँगी कि अब्बाजान ने बाबाजान की तलवार का सामना तलवार से करने का मार्ग पकड़कर भूल ही की। दुर्गादास जी ने भी हिंसा से रक्षा पाने के लिए हिंसा का ही सहारा लेकर अच्छा नहीं किया।

बुलंद अख्तर — तो तुम्हारी सम्मति में दुर्गादास जी अबोध शिशु अजीत सिंह जी को बाबाजान की गोद में डाल देते कि लीजिए, काटिए इसकी गर्दन। और अब्बाजान बाबाजान के आगे सिर झुका देते और कहते इसे धड़ से जुदा कर दीजिए।

सफीयतुन्निसा — मैं यह तो नहीं कहती कि बालक अजीत सिंह जी को चिर भूखे सिंह सम्राट् औरंगजेब की डाढ़ों में डाल देना चाहिए था।

लेकिन यह अवश्य कहूँगी कि दुर्गादास जी और उनके साथी तलवार पकड़ने के बजाय अपने प्राण देने को प्रस्तुत हो जाते, सारा मारवाड़ जान बचाने के लिए तलवार पकड़ने का यत्न न करके—हर कष्ट सहने और जान देने को तैयार हो जाता। अब्बाजान राजपूतों का सहारा लेने के बजाय बाबाजान से ही कहते—मैं अजीतसिंह जी की जगह अपनी जान आपको देता हूँ, फूफीजान जेबुन्निसा बेगम अब्बाजान को विद्रोह के लिए भड़काने के बजाय बाबाजान से कहतीं—तुम गलत रास्ते पर चल रहे हो, मैं जीते जो ऐसा नहीं होने दूँगी; और हिन्दू सहस्रों की संख्या में बन्दीगृह में जाते, कोड़े खाते, सर कटवाते, लेकिन जजिया नहीं देते तो मुझे भरोसा है बाबाजान का हृदय भी काँप जाता।

बुलंद अख्तर ये बच्चों के जैसी बातें हैं भोली बहन! ऐसा कभी हुआ है, ऐसा कभी हो सकता है? इंसान लड़ते-लड़ते जान गँवा सकता है, लेकिन बिना विरोध किये चुपचाप गर्दन झुकाकर तलवार का वार सह ले और प्राण दे दे यह नहीं हो सकता। हिंसा से लड़ने का यह मार्ग है ही नहीं।

सफ़ीयतुन्निसा लेकिन हिन्दुस्तान के लिए यह मार्ग नया तो नहीं है भाईजान! चित्तौड़ की वीरांगना पद्मिनी अपनी पवित्रता और सम्मान की रक्षा करने के लिए किस तरह अपनी हजारों साथिनियों के साथ जौहर की ज्वाला में समा गयी थीं क्या यह तुमने नहीं पढ़ा? उसी चित्तौड़ दुर्ग में महारानी कर्मवती ने सोलह हजार वीरांगनाओं के साथ जौहर व्रत का पालन किया था। और अभी कुछ वर्ष पहले ही दिल्ली की एक हवेली में मारवाड़ की वीर बालाओं ने एक कोठरी में बारूद बिछाकर अपने हाथ से आग

लगा ली थी ताकि राजपूत योद्धा शिशु अजीत सिंह की रक्षा प्राण-पण से कर सकें। जब यहाँ की स्त्रियाँ इतना साहस दिखा सकती हैं तो पुरुष क्या आत्मबलि-व्रत का पालन नहीं कर सकते ?

बुलंद अख्तर अवश्य कर सकते हैं लेकिन तभी जब वे चूड़ियाँ पहनने लगें। मेरी अच्छी बहन ! तुम जो रास्ता प्रदर्शित कर रही हो वह केवल कल्पना है – सपना है। हिंसा का मार्ग पकड़ने पर सहस्रों की संख्या में प्राण गँवाने पड़ते हैं—अहिंसा के पथ का अनुसरण करने पर उससे कम ही जानें लुटानी पड़ेंगी लेकिन फिर भी कोई भी पुरुष इस पथ को अपनाने के लिए प्रस्तुत होगा, इसमें मुझे संदेह है। अच्छा बहन ! तुम चाँदनी रात में जागती हुई सपने देखो, चाँद-तारों से वार्तालाप करो, शून्य को गीत सुनाओ, मैं तो चला, संभवतः रणभेरी बज उठे और मुझे रण-भूमि में जाना पड़े। खुदा हाफिज !

[बुलंद अख्तर प्रस्थान करता है। सफीयतुन्निसा एक शिला पर बैठकर गीत गाती है। जब गीत आधा गाया जा चुका है तब अजीत सिंह चुपचाप आकर इस प्रकार खड़ा हो जाता है कि सफीयतुन्निसा उसे न देख पाये और उसके गीत में विघ्न न पड़े। अजीत सिंह स्वर्गीय महाराज जसवंत सिंह का पुत्र लगभग उन्नीस-बीस वर्ष का नवयुवक है। गौरवर्ण, लंबा कद, सुगठित शरीर, बड़ी-बड़ी तेजस्वी आँखें, दाढ़ी-मूछों की रेखाएँ फूटने लगी हैं। इस समय वह राजसी ठाट में न होकर साधारण राजपूतोपयुक्त वस्त्र धारण किये हुए है लेकिन कमर में तलवार जरूर बँधी हुई है।]

सफीयतुन्निसा—(गीत)

है सुहानी रात चंदा मुसकुराता है ?
कुछ नया तूफान प्राणों में उठाता है !

चाँद के हैं लाख तारे, कौन मेरा है ?
चाँदनी जग में खिली दिल में अँधेरा है।
डाल रक्खा रिक्तता ने गहन घेरा है,
किंतु छुप-छुप कौन मुझको अब बुलाता है ?

है सुहानी रात चंदा मुसकुराता है ?
कुछ नया तूफान प्राणों में उठाता है !

इस हृदय में वेदना का चिर बसेरा है।
मैं न सुख को जानती, दुख मीत मेरा है।
शून्यता को चीर किसने आज हेरा है।
कौन आँखों में नये सपने जगाता है।

है सुहानी रात चंदा मुसकुराता है,
कुछ नया तूफान प्राणों में उठाता है !

[गीत समाप्त होते ही जैसे सफीयतुन्निसा मुँह घुमाती है उसकी दृष्टि अजीत सिंह पर पड़ती है ।]

सफीयतुन्निसा (हैरान होकर) कौन मारवाड़-नरेश महाराजा अजीत सिंह जी ! कब से खड़े हैं यहाँ ?

अजीत सिंह अनेक युगों से ।

सफीयतुन्निसा यह आपका अत्याचार है महाराज !

अजीत सिंह — कैसा ?

सफीयतुन्निसा — मुझसे अकेले में मिलना ।

अजीत सिंह — अपराध बन पड़ा शाहजादी ! लेकिन बहुत बार दूर रहकर आपकी स्वर-माधुरी का रस पान करता रहा हूँ, आज खिंचा चला ही आया । संगीत में बहुत आकर्षण होता है—विषधर काले नाग को वह नचाता है, भोला-भाला हिरन उसपर मोहित हो अपने प्राण गँवा देता है ।

सफीयतुन्निसा — लेकिन आप न साँप हैं, न भोले भाले मृग ।

अजीत सिंह — मनुष्य क्या नहीं है शाहजादी ! वह साँप भी है और भोला-भाला मृग भी । प्रतिहिंसा उसे काला नाग बना देती है, अन्यथा वह भोला-भाला मृग ही है । मृग के रूप में ही मैं आपके सम्मुख आया हूँ । (**अपना मस्तक सफीयतुन्निसा के समक्ष नत करता हुआ**) यह मस्तक आपके चरणों में झुका हुआ है । काट डालिए इसे, जिसे पाने के लिए सम्राट् औरंगजेब ने सहस्रों मस्तक कटवा दिये और काट लिये ।

सफीयतुन्निसा — महाराज, उठाइए अपना मस्तक और सिर कटाने का बहुत शौक है तो इसे सम्राट् औरंगजेब के आगे झुकाइए ।

अजीत सिंह — (**सिर उठाकर**) शाहजादी, राठौर का मस्तक शक्ति के आगे नहीं झुकता, वह झुक सकता है केवल प्यार के आगे ।

सफीयतुन्निसा — लेकिन मैंने तो कभी आपको प्यार नहीं किया महाराज ! मैं तो आपकी अतिथि हूँ—माँ-बाप से बिछुड़ी हुई अभागी लड़की हूँ—मेरी बेबसी का अनुचित लाभ उठाने का यत्न न कीजिए ।

अजीत सिंह घबराओ नहीं, शाहजादी, राजपूत अतिथि का मान करना जानता है। मारवाड़ का बच्चा-बच्चा आपके सम्मान के लिए अपने प्राण न्योछावर करने को प्रस्तुत है, किंतु······

सफीयतुन्निसा किंतु क्या ?

अजीत सिंह अजीत सिंह भी आपकी भाँति अभागा है। उसने संसार में आने के पहले ही अपने पिता को गँवा दिया। बचपन भी माँ से दूर गुप्त स्थान में उसे बिताना पड़ा और जब वह माँ को पहचानने योग्य हुआ तो उसने देखा उसकी माँ वीरांगना की मृत्यु पा चुकी है। घोड़ों की पीठ ही उसके लिए माँ की गोद रही है, तलवारों की झंकार ही उसके लिए माँ की गायी हुई लोरी बनी है। आपके और मेरे जीवन में कितना साम्य है शाहजादी ! आपको भी जन्म से ही माँ की गोद नहीं मिली, क्योंकि अजमेर में वह सम्राट् औरंगजेब के हाथ पड़ गयीं और आपके अब्बाजान आपको मारवाड़ के हाथों में सौंप कर दक्षिण चले गए। तब से आप उनका मुँह भी नहीं देख सकीं।

सफीयतुन्निसा जो लोग देश का दर्द प्राणों में पाले हुए – सिर पर कफन बाँधे विचरण करते हैं, उनके बच्चों को ऐसे कष्ट सहने ही पड़ते हैं महाराज !

अजीत सिंह हृदय को पाहन तो नहीं बनाया जा सकता, शाहजादी, लेकिन जाने दो, मैं अब आपसे कुछ नहीं कहूँगा। आज तक चोरी करता रहा हूँ, छुप-छुप कर आपको देखता रहा हूँ, आपके गीत सुनता रहा हूँ। सपनो मे आपको देखता रहा हूँ। अब मैं चोरी नहीं करूँगा।

सफीयतुन्निसा तो डाका डालोगे ? राजा, महाराजा, सम्राट् ये सब डाकू ही तो हैं।

अजीत सिंह — लेकिन प्रेम क्या चोरी से पाया जा सकता है ? क्या उस पर डाका डाला जा सकता है ? मेरे अंतःकरण में आपको देखकर अकस्मात् ही एक तूफान उठ पड़ा था ।

सफीयतुन्निसा — जो अब समाप्त हो गया ।

अजीत सिंह — नहीं, असत्य मैं नहीं बोलूँगा । तूफान है, और उठता रहैगा, लेकिन समुद्र कितना ही चन्द्रमा को देखकर उछले फिर भी चंद्रमा आकाश से नीचे नहीं उतरता ।

सफीयतुन्निसा — न आप समुद्र हैं, न मैं चन्द्रमा हूँ ।

अजीत सिंह — अर्थात् धरती और प्रकाश के छोर मिल सकते हैं ।

सफीयतुन्निसा — धरती और आकाश का मिलन एक भ्रम है, छल है महाराज !

अजीत सिंह — तब ?

सफीयतुन्निसा — मनुष्य और मनुष्य का मिलन वास्तविक है ।

अजीत सिंह — क्या मैं आपको पा सकता हूँ ?

सफीयतुन्निसा — मुझे पाकर क्या करेंगे आप महाराज !

अजीत सिंह — मैं आपको मारवाड़ की महारानी ही नहीं, भारत की साम्राज्ञी बनाऊँगा ?

सफीयतुन्निसा — और इसके लिए वही सब कुछ करोगे जो सम्राट् औरंगजेब ने किया है, और कर रहे हैं ?

अजीत सिंह — मैं मस्जिदें नहीं गिरवाऊँगा, कुरान शरीफ का अपमान नहीं करूँगा, मुसलमानों को दंड नहीं दूँगा ।

सफीयतुन्निसा लेकिन सम्राट् बनने के लिए खुदा की खलकत का खून तो पियोगे ।

अजीत सिंह राज-सिंहासन का मार्ग तो रक्त के सागर में से ही है शाहजादी !

सफीयतुन्निसा और मुझे रक्त के समुद्र से नफरत है महाराज !

अजीत सिंह लेकिन राजपूत रक्त के समुद्र में मगर की भाँति तैरता है ।

सफीयतुन्निसा क्या आपका राजपूत बना रहना आवश्यक है ।

अजीत सिंह तो क्या आपको पाने के लिए मुझे मुसलमान बनना होगा ।

सफीयतुन्निसा वह तो आप करोड़ सफीयतुन्निसाओं के लिए भी नहीं बनेंगे, न यह मैं चाहूँगी क्योंकि मुसलमानों को भी तो रक्त के सागर से घृणा नहीं है ।

अजीत सिंह तब आप मुझे क्या बनाना चाहती हैं—भेड़ या बकरा ।

सफीयतुन्निसा नहीं, केवल इंसान । हिन्दुस्तान का दुर्भाग्य है कि उसे राजा-महाराजा चाहिए—सम्राट् चाहिए, इंसान नहीं ।

अजीत सिंह देश में शान्ति और न्याय-व्यवस्था रखने के लिए कोई तो चाहिए ।

सफीयतुन्निसा और आप समझते हैं राजा, महाराजा, सम्राट् न्याय-व्यवस्था करते हैं, नहीं वे केवल परस्पर युद्ध करते हैं, अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए बड़ी-बड़ी सेनाएँ रखते हैं । सेनाओं के व्यय के लिए प्रजा को लूटते हैं । प्रजा के धन लूटने के उपायों को वह शासन-व्यवस्था का मीठा नाम देते हैं । महाराजा या सम्राट् बनना कोई ऊँचा काम नहीं है ।

अजीत सिंह — तब ऊँचा काम क्या है ?

सफीयतुन्निसा — ऊँचा काम है इंसान बनना। इंसान बनने में जो सुख है— अपनी छोटी-सी झोपड़ी में संतोष की रोटियाँ खाने में जो सुख है, वह क्या राजमहलों में प्राप्त हो सकता है ?

अजीत सिंह — एक अजीत सिंह के झोपड़ी में बैठ जाने से राजा-महाराजाओं और सम्राटों का अंत नहीं आ जायेगा शाहजादी !

सफीयतुन्निसा — नहीं आ जायेगा, यह मैं जानती हूँ लेकिन यह भी मेरा भरोसा है, इस देश में एक दिन ऐसा आयेगा जब युग-युग से प्रपीडित प्रजा उठेगी और अपने बलिदानों के बल पर राजाओं-महाराजाओं और सम्राटों का हाथ पकड़-पकड़ कर उन्हें मार्ग पर खड़ा कर देगी। प्रजा स्वयं शासक बनेगी—धर्म का, जाति और वंश के बड़प्पन का नशा पिलाकर कब तक उसे अंधा बनाकर रखा जा सकेगा ? महाराज, मैं तो यही सपना देखती हूँ। इंसान बनने का साहस करो और जिस दिन इंसान बन जाओ, उस दिन मुझे पुकारना—मैं उपस्थित हो जाऊँगी; अच्छा अब जाती हूँ।

[**सफीयतुन्निसा जाने लगती है। अजीत सिंह उसे रोकता हुआ उसका हाथ पकड़ लेता है।**]

अजीत सिंह — जाओ मत शाहजादी, अभी मुझे बहुत बातें करनी हैं। आज मेरे हृदय का बाँध टूट गया है। बहुत दिनों तक मैंने हृदय पर शिलाओं को रखा है। आज वे शिलाएँ भावनाओं के उद्रेक से खंड-खंड होकर बह पड़ी हैं। आज मैं होश में नहीं हूँ शाहजादी !

[कासिम खाँ और दुर्गादास प्रवेश करते हैं। इस समय दुर्गादास पूर्ण सैनिक वेष में हैं। कासिम खाँ साधारण मुस्लिम वेशभूषा में। कासिम खाँ की आयु दुर्गादास की आयु के लगभग ही हैं। सफेद दाढी-मूँछे चेहरे को अद्भुत भव्यता प्रदान कर रही हैं।]

दुर्गादास — महाराजा को होश में रखनेवाला अभी मर नहीं गया है। [सफीयतुन्निसा और अजीत सिंह दुर्गादास और कासिम खाँ को हैरानी से देखते हैं। अजीत सिंह सफीयतुन्निसा का हाथ छोड़ देता है।]

अजीत सिंह — सारे संसार को होश में रखने का भार सम्भवतः वीरवर दुर्गादास जी के कन्धों पर ही है।

कासिमखाँ — अन्नदाता, मुझे क्षमा करें—मैं यह कहने की धृष्टता कर रहा हूँ कि आज आप ही नहीं सम्पूर्ण मारवाड़ के जीवन के संरक्षक वीरवर दुर्गादास राठौर हैं। ये न होते तो आपको न होश सम्हालने का अवसर मिलता, न होश गँवाने का। आपकी प्रत्येक साँस को उनका कृतज्ञ होना चाहिए।

दुर्गादास — नहीं कासिम खाँ, तुम महाराजा को कुछ न कहो। मैंने आज तक जो कुछ किया अपने देश की संतान होने के नाते, मारवाड़ की गद्दी का एक सेवक होने के नाते किया, एक मनुष्य होने के नाते किया, जीवन भर महाराजा को उपकारों की याद दिला कर उन्हें छोटा बनाने के लिए नहीं।

कासिम खाँ — (सफीयतुन्निसा से) शाहजादी हुजूर डेरे पर जाने का कष्ट करें।

सफीयतुन्निसा — नहीं, मैं आप बड़े लोगों की बातें सुनना चाहती हूँ। कदाचित् कुछ सीखने को मिल जाये।

कासिम खाँ — इसका अर्थ हुआ कि दोनों तरफ आग बराबर लगी हुई है।

सफीयतुन्निसा — नहीं काकाजी, आग कहीं नहीं लगी है। चाँदनी को भी कोई आग मान ले तो दोष किसका है।

दुर्गादास — दोष किसी का नहीं मनुष्य की प्रकृति का है। फूस और आग का पास आना भी भयानक होता है, शाहजादी! छोटी-सी चिनकारी भी भयंकर ज्वाला में परिवर्तित हो उठती है।

अजीत सिंह — प्रत्येक ज्वाला भयंकर और हानिप्रद ही होती है, क्या यह ठीक है?

दुर्गादास — आग पर लपकनेवाला शलभ नहीं जानता कि उजला-उजला दिखाइ देने वाला रूप प्राण-लेवा होता है। राजपूत राजा को अन्नदाता कहते हैं और भगवान की भाँति उसे पूज्य मानते हैं, इसलिए अब जब आप बालक नहीं रहे मुझे आपको शिक्षा देने का अधिकार नहीं है। दुर्गादास अपनी मर्यादा को जानता है, लेकिन वह अपने कर्त्तव्यों को भी समझता है और उनका पालन करना चाहता है।

अजीत सिंह — आपका कर्त्तव्य क्या कहता है?

दुर्गादास — अन्नदाता, शाहजादी सफीयतुन्निसा दुर्गादास के पास उसके एक मित्र की पवित्र धरोहर है। यह मेरा व्यक्तिगत उत्तरदायित्व है। आप उसे असुरक्षित समझ कर उसकी तरफ हाथ बढ़ाएँ, यह राजपूतों की वीरता के अनुकूल नहीं है।

अजीतसिंह — तो आप मुझे कायर समझते हैं ?

दुर्गादास — भगवान् रामचन्द्र के वंश में जन्म लेनेवाले महाराज जसवंत सिंह के पुत्र को कायर मैं कैसे समझ सकता हूँ, लेकिन इसे भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि बड़े-बड़े वीर और महान् से महान् ज्ञानी और साधु से भी कभी भूल हो जाती है। ऋषिवर विश्वामित्र का उदाहरण आपने पढ़ा होगा। स्त्री पुरुष के लिए सबसे बड़ा वरदान है और वही सबसे बड़ा अभिशाप है।

सफीयतुन्निसा — क्षमा कीजिए, वीरवर दुर्गादास जी, मुझे बीच में बोलना पड़ रहा है। आपने महाराजा से अधिक मुझ पर आक्षेप किया है। आपने मुझे सारे मुस्लिम धार्मिक ग्रन्थों की शिक्षा दिलायी है, लेकिन साथ ही मैंने अपनी इच्छा से हिन्दू धर्मग्रन्थों को भी पढ़ा है। आपने मेरी तुलना मेनका से कर डाली है।

दुर्गादास — क्षमा करो शाहजादी, कदाचित् असावधानी में मेरे मुँह से अनुपयुक्त उदाहरण निकल गया है। संभवत: दीपक ने शलभ का आह्वान नहीं किया। मैं तो महाराजा को केवल यह जताना चाहता था कि पुरुष को नारी के प्रति व्यवहार करने में बहुत सावधान रहने की आवश्यकता है। यौवन अन्धा होता है। उसका क्षणिक उन्माद राष्ट्रों के इतिहास को बदल सकता है। आप मुगल महलों में होतीं तो मुझे कुछ नहीं कहना पड़ता, लेकिन दुर्भाग्य से कहो या सौभाग्य से तुम दुर्गादास के संरक्षण में हो। मैं नहीं चाहता कि मारवाड़ के किसी व्यक्ति की—चाहे वह राजा ही हो—असावधानी से मुसलमानों की भावनाओं को ठेस लगे।

क़ासिम खाँ — और प्रश्न मुसलमानों की भावना का ही नहीं है, राजपूतों की भावना का भी है। आप दोनों की घनिष्टता को राजपूत भी स्वीकार नहीं करेंगे। राठौर राजवंश स्वभाव से हठी रहा है और राजपूत सामन्त भी चिरकाल से चली आयी परम्पराओं के पक्षपाती हैं। परिणाम होगा अन्तःकलह। मारवाड़ की आशाओं का सदा के लिए अन्त। जिस मारवाड़ को आपके अब्बाजान ने मित्र माना था उसका सर्वनाश आपके कारण हो, यह तो आप भी नहीं चाहेंगी।

सफीयतुन्निसा — तो क्या हिन्दू और मुसलमानों के बीच की सामाजिक दीवारें टूटेंगी नहीं ?

दुर्गादास — भगवान जाने वह शुभ दिन कब आयेगा ? दुर्भाग्य से दुर्गादास ने ऐसे समाज में जन्म लिया है जिसकी सीमा के अन्तर्गत और भी छोटी-छोटी अनेक सीमाएँ हैं। हमें पहले इन अनावश्यक, संकीर्ण और हानिप्रद सीमाओं को तोड़ना होगा—तब कहीं एक बलवान हिन्दू समाज का निर्माण होगा—उसके पश्चात् हिन्दू और मुसलमान के बीच की सामाजिक दीवार तोड़ी जा सकेगी। इसके लिए बहुत संघर्ष करना पड़ेगा, शाहजादी !

सफीयतुन्निसा — क्या आप संघर्ष से भय खाते हैं ?

दुर्गादास — भय शब्द दुर्गादास के शब्द-कोष में नहीं है शाहजादी ! लेकिन इस समय तो मारवाड़ को आत्म-रक्षा का युद्ध करना पड़ रहा है। इस समय जिस युद्धक्षेत्र में उसकी प्रथम आवश्यकता है इसमें यह उपस्थित है। पहले सोपान पर चढ़े बिना कोई अन्तिम सोपान पर कैसे पहुँच सकता है ? मनुष्य की शक्ति की सीमाएँ होती हैं।

अजीत सिंह हमारे पूर्वजों ने इन संकीर्णताओं से संग्राम करके इन्हें परास्त किया होता तो आज हमें यह आत्म-रक्षा का युद्ध भी क्यों करना पड़ता ?

दुर्गादास 'जात-पात पूछे ना कोई, हरि को भजे सो हरि का होई।' गानेवाले हमारे सन्तों ने क्या कम संघर्ष किया है महाराज ! किन्तु जन-मानस में अन्धकार ने ऐसी जड़ें स्थापित की हैं कि कोई चेष्टा उन्हें उखाड़ने में सफल नहीं हो सकी। अन्धकार तो तलवार से नहीं काटा जा सकता। उसके लिए ज्ञान का दीपक हृदय-हृदय में प्रज्वलित करना पड़ेगा। कितना विस्तृत है हमारा देश ? नव प्रकाश की किरणें प्रत्येक कोने में पहुँचाने के लिए ज्ञान का दीपक हाथ में लेकर चलनेवाली कितनी बड़ी सेना चाहिए। अन्धकार से संग्राम करनेवाली सेना स्वर्ग से नहीं प्राप्त होती। और कोई विचारधारा तलवार से नहीं प्रसारित की जा सकती।

सफीयतुन्निसा किन्तु बाबाजान तो तलवार की ताकत से ही अपनी विचार-धारा हिमालय की चोटियों से लेकर कन्याकुमारी तक प्रसारित कर देना चाहते हैं।

दुर्गादास तुम विषयान्तर में जा रही हो शाहजादी ! लेकिन जब तुमने बात उठायी ही है तो मुझे इस सम्बन्ध में निवेदन करना ही पड़ेगा। मैं तो सम्राट् औरंगजेब की तलवार को धन्यवाद ही दूंगा। उन्होंने भारत के प्रसुप्त रोष को, अचेतन तेज को झकझोर कर जगा दिया है। सम्राट् अकबर महान् से लेकर उदार हृदय शाहजहाँ और सन्तप्रवर दाराशिकोह तक उनके प्यार ने हिन्दू समाज को अपनी दुर्बलताओं से बेसुध कर दिया था। संघर्षहीन जीवन के अन्तराल में अन्धकार पनप रहा था। सम्राट्

औरंगजेब हमारी दुर्बलता से परिचित हैं और इसीलिए उन्होंने हम पर प्रहार किया है। इस प्रहार ने किसी मात्रा में हमें अपने अन्तःकरण में झाँकने को विवश कर दिया है। हम समझने लगे हैं कि न केवल मुसलमान ही भारत है, न केवल हिन्दू ही। दोनों को यहीं जीना है, यहीं मरना है। औरंगजेब चाहते हैं कि उन्होंने मुस्लिम संस्कृति का जो भी गलत-सलत रूप समझ रखा है वही भारत की एकमात्र संस्कृति रहे—वही राज्य करे, लेकिन सहस्रों वर्षों की हिन्दू संस्कृति, चाहे उसके वास्तविक स्वरूप से हम दूर हो गये हों, अपनी मौत मरने के लिए तैयार नहीं हैं। पंचनद प्रदेश में सिखों, ब्रज में जाटों, बुन्देलखंड में बुन्देलों, राजस्थान में राजपूतों और महाराष्ट्र में मराठों के रूप में हिन्दुओं के तेज की ज्योतियाँ जगमगा उठी हैं। ये असंगठित हैं—अपनी सीमाओं में बँधी हुई हैं—लेकिन अब यह राजाओं का युद्ध नहीं रहा। अब इस युद्ध को लड़ने के लिए छत्रपतियों और महाराजाओं की आवश्यकता नहीं है। जन-जीवन स्वयं ही इस युद्ध को लड़ लेगा।

[मुकुन्ददास खीची का प्रवेश। मुकुन्ददास दुर्गादास से आयु में कुछ ही कम है। वह राजपूती सैनिक परिधान में है। दुर्गादास के समान ही तेजस्वी दिखायी देता है। वह महाराजा अजीत सिंह को झुककर वंदना करता है।]

मुकुन्ददास जोधपुर नरेश राठौर कुल दिवाकर महाराजा अजीत सिंह जी मुकुन्ददास खीची जुहार निवेदन करता है।

अजीत सिंह जुहार मुकुन्ददास जी। कहो, किस लिए आना हुआ है?

मुकुन्ददास मुझे श्रीमान् दुर्गादास जी ने एक कार्य पर भेजा था उसी के सम्बन्ध में इनसे कुछ निवेदन करने आया हूँ।

अजीत सिंह मुझसे नहीं।

दुर्गादास मैं या मुकुन्ददास जी खीची अथवा मारवाड़ का कोई भी सामन्त कुछ भी करता है वह आपके प्रतिनिधि के रूप में ही तो करता है।

अजीत सिंह लेकिन अनेक कार्य मुझसे भी छुपाये जाते हैं। क्या मैं कुछ भी नहीं हूँ।

दुर्गादास अन्नदाता, आप कुछ न होते तो किसलिए न केवल राठौरों की प्रत्येक शाखा के, बल्कि अनेक सीसोदिया, हाड़ा, भट्टी, गौड़ और खीची आदि राजपूतों के मस्तक आपकी रक्षा के लिए कटवाये जाते? किसलिए आड़ावड़ा के प्रत्येक भाकर† डूंगर,* घाटी और खाल को राजपूत अनेक रक्त से सींजते? किसलिए लूणी नदी का पानी लाल होता? किसलिए सांभर झील के नमक में राजपूतों का रक्त सम्मिलित होता? आपके लिए मारवाड़ ने कितना मूल्य चुकाया है इसे आप भूलिए नहीं।

अजीत सिंह मूल्य चुकाने के पश्चात् आप मुझे अपने हाथ का खिलौना बनाकर रखना चाहते हैं। ताकि आप मारवाड़ पर निर्द्वन्द राज्य कर सकें।

कासिम खाँ महाराजा, आप मुझे काका कहते हैं क्योंकि मैं जब आप दुध-

---

†नंगे पहाड़ जिनपर हरियाली नहीं होती।
*हरियालीवाले पहाड़।

मुँहे शिशु थे तब आपको टोकरी में रख कर दिल्ली से सिरोही तक लाया था। आपने मुझे जो मान दिया है उसी अधिकार से आपसे निवेदन करता हूँ कि आप सन्देह और असन्तोष के बादल अपने मन पर से हटा दीजिए। संसार भर में हाथ में दीपक लेकर घूम आओगे तब भी दुर्गादासजी जैसा शुभचिन्तक, वीर, स्वामिभक्त और निश्छल व्यक्ति कहीं न पायेंगे।

अजीत सिंह आप लोग मुझे एक बार टोकरी में रखकर लाये थे इसी से सदा टोकरी में बन्द ही रखना चाहते हैं। अब मैं बालक नहीं हूँ कासिम खाँ जी मैं महाराजा जसवंत सिंह जी का पुत्र हूँ जो केवल बारह वर्ष की आयु में राजसिंहासन पर आसीन हुए थे।

सफीयतुन्निसा (**बीच में बोलती हुई**) मेरा खयाल है आप लोग मुझे जाने की अनुमति देंगे।

दुर्गादास अवश्य ही तुम जा सकती हो। यह हमारा आपस का खिलवाड़ है। इसमें आपका कोई प्रयोजन भी नहीं है।

[**सफीयतुन्निसा का प्रस्थान**]

दुर्गादास (**बोलना चालू रखकर**) वो महाराजा अजीत सिंह समझते हैं, दुर्गादास को राजसत्ता का मोह है।

मुकुन्ददास आप संभवत: नहीं जानते कि मैं उस मुगल राज-सभा में उपस्थित था जब सम्राट् औरंगजेब ने कहा था—"दुर्गादास, तुम मुझे जसवंत सिंह के दोनों नवजात शिशु दो, मैं तुम्हें मारवाड़ की राजगद्दी दूँगा।" तब दुर्गादास जी ने कहा था—ईश्वर आकर कहे, मैं तुम्हें स्वर्ग का सिंहासन देता हूँ, तब भी सच्चा राजपूत अपने स्वामी के साथ विश्वासघात

नहीं करेगा। इन्हें राजसत्ता का मोह होता तो क्या इतनी लम्बी अवधि तक प्रतीक्षा करनी पड़ती।

दुर्गादास — महाराज, मेरे पिता आसकरण जी आपके पिता श्री जसवंत सिंह जी के दीवान थे। कभी स्वर्गीय महाराजा ने उनपर अविश्वास नहीं किया, युद्धभूमि और राजमहल—सभी स्थानों पर महाराजा ने उन्हें अपना कवच बनाकर रखा मेरे पिताजी की मृत्यु के पश्चात् मुझे उनका स्थान प्राप्त हुआ। महाराज ने मुझे न केवल दीवान और सेनापति की स्थिति में रखा अपितु अपना भाई मान कर रखा। उनका प्यार और उनका नमक मेरे अंग-अंग में समाया हुआ है। आप महाराजा हैं, लेकिन सच पूछो तो मेरे पुत्र से बढ़कर हैं। आप मेरे धनी की निशानी है—धनी हैं। धनी का मान रखना राजपूत का आन होती है और इस आन का मान रखना उसके जीवन का व्रत होता है। इस व्रत का पालन करने में मैंने अपने दो पुत्रों के शीश कटवाये—आपके समान ही सुन्दर और तेजस्वी थे वे। उन्हें भी संसार में रहने का अधिकार था। बाप होने पर भी मैंने उनके लिए आँसू नहीं बहाये। क्यों बहाता ? मेरे आँसू तो तिरोहित हो गये उन सहस्रों माँ-बापों की आँखों के आँसुओं में जिन्होंने हँसते-हँसते अपने लालों के शीश मारवाड़ की आन का मान रखने के लिए इस मरुभूमि की बालू में बो दिये। इस बालू में अन्न चाहे न पैदा हो लेकिन शीश बोने से शीश अवश्य उपजते हैं। आप चाहें तो यह बूढ़ा दुर्गादास अपना मस्तक आपके चरणों के पास इस बालू में बो सकता है।

[सभी की आँखों में आँसू आ जाते हैं। अजीत सिंह भी द्रवीभूत हो जाते हैं।]

अजीत सिंह (दुर्गादास के चरणों में गिरते हुए) काका जी ! मुझे क्षमा करो, मैं पागल हो उठा हूँ ।

दुर्गादास (अजीतसिंह को उठाकर गले लगाते हुए) मेरे बच्चे ! तुम जानते हो आज मारवाड़ की क्या स्थिति है ? आज भी जोधपुर के किले पर मुगल झंडा फहरा रहा है । जब तक हम उस पर मारवाड़ की पताका नहीं फहरा लेते तब तक हमें किसी और बात पर नहीं सोचना है । हमारा प्रथम लक्ष्य है मारवाड़ की स्वाधीनता । तुम समझते हो तुम्हारे मन में शाहजादी सफीयतुन्निसा के लिए जो कोमल भावनाएँ हैं उन पर मैं नियंत्रण करके तुमपर अत्याचार करता हूँ । लेकिन मेरे लाडले, यह प्रश्न बहुत नाजुक है । वह हमारी शरणागत है, मैं उसके सामने इस शब्द का प्रयोग करके उसका दिल नहीं दुखाना चाहता था । संसार को यह कहने का अवसर मत दो कि राजपूत शरणागत और विशेष रूप से नारी का मान करना नहीं जानते । राजपूती गौरव की उज्ज्वल चादर पर दाग न पड़ने दो, बेटा ! आदर्शों के लिए जीने और मरनेवाले का जीवन शूली पर सेज बिछाकर सोने के समान है ।

[इसी समय नगाड़ों के बजने का तुमुल नाद होता है। सब चौंकते हैं ।]

दुर्गादास सुन रहे हो महाराजा ! ये नगाड़े हमारे चौकसीदारों के हैं । कह रहे हैं सावधान ! मुगल सेना आ रही है । बीस साल से हम सुख की नींद एक रात भी नहीं सो सके हैं । कब हमपर आक्रमण हो जाये इसका क्या ठिकाना । और सच तो यह है कि हमने शत्रुओं को भी सुख की नींद नहीं सोने दिया । दोनों दल क्या साँझ, क्या सबेरा, क्या दिन और क्या रात—प्रत्येक

क्षण मृत्यु की विभीषिका से आक्रान्त रहते हैं, चलो हमें शत्रु का आक्रमण विफल करने के लिए कार्यवाही करनी चाहिए।

[सब प्रस्थान करने को उद्यत होते हैं इतने में ईश्वरदास आता है। ईश्वरदास प्रौढ़ आयु का, सौम्य प्रकृति का, आँखों में चतुराई की छलक रखनेवाला, वेशभूषा से ब्राह्मण जान-पड़नेवाला है।]

ईश्वरदास मारवाड़ाधिपति राठौर-वंश-दिवाकर श्रीमान् अजीतसिंह जी एवं वीरवर-दुर्गादास जी को पाटन का ब्राह्मण ईश्वरदास नमस्कार करता है।

दुर्गादास बहुत कुसमय आये हो द्विजदेव, जब आपका सत्कार करने के लिए भी समय नहीं है हमारे पास।

ईश्वरदास नगाड़ों की आवाजों ने चौंका दिया है आपको।

कासिम खाँ हाँ, ये नगाड़े सूचित करते हैं कि शत्रु से लोहा लेने के लिए प्रस्तुत हो जाओ।

मुकुन्ददास और हमारी भुजाएँ तलवारें चमकाने के लिए फड़क रही हैं।

अजीत सिंह और हमारी तलवारें शत्रु का रक्त पीने के लिए व्याकुल हो उठी हैं।

ईश्वरदास लेकिन यह ब्राह्मण इस रक्त-वर्षा को रुकवाने के लिए आया है।

दुर्गादास कुछ जादू जानते हो ईश्वरदास जी!

मुकुन्ददास यह जादू आज तक कहाँ सो रहा था?

ईश्वरदास — जहाँ सम्राट् औरंगजेब की बुद्धि सो रही थी।

अजीत सिंह — तो क्या अब उनकी बुद्धि का उष:काल आ गया ?

ईश्वरदास — हाँ, नव प्रभात की लाल किरणें दिखायी तो देती हैं।

दुर्गादास — तो आप सम्राट् के पास से आ रहे हैं ?

ईश्वरदास — हाँ, सम्राट् ने मुझे मारवाड़ के मुगल सूबेदार शुजाअत खाँ के पास उनका सन्देश लेकर भेजा था और उन्होंने आपके पास भेज दिया है।

कासिम खाँ — तो पास में सम्भवत: शुजाअत खाँ ही अपनी सेना लिए पड़े हैं जिसकी सूचना हमारे चौकसीदारों की तुरही और नगाड़ों के नाद ने दी है।

ईश्वरदास — हाँ, लेकिन इस बार वह आपसे सन्धि की चर्चा करने आये हैं।

मुकुन्ददास — थक गए हैं लड़ते-लड़ते या वह हमें थपकी देकर सुला देना चाहते हैं !

ईश्वरदास — थका कौन नहीं है, मुकुन्ददासजी ! अपने कलेजे पर हाथ रख कर कहो—क्या मारवाड़ नहीं थका ? क्या मारवाड़ में एक भी ऐसी माँ है जिसने अपना एक न एक बेटा रणचंडी की दाढ़ों को नहीं सौंप दिया ? क्या एक भी बहन ऐसी है जिसका भाई युद्ध की ज्वाला में नहीं समाया ? कितनी नारियों के सुहाग हिंसा की लपलपाती जिह्वा ने पोंछ डाले हैं ? युद्ध से किसे लाभ होता है ? पराजित तो मरता ही है, विजेता भी मृत्यु की अन्तिम साँसें ही लेता रहता है।

दुर्गादास — इसे हम जानते हैं। हमने किसी को युद्ध की चुनौती नहीं दी। फिर भी सर्वनाश के भय से हम हथियार नहीं डालेंगे।

अजीत सिंह — हम जब तक सम्पूर्ण मारवाड़ को शत्रुओं के हाथ से मुक्त नहीं कर लेंगे, हमारी तलवार म्यान में नहीं जायेगी।

ईश्वरदास — लेकिन सम्राट् औरंगजेब अपनी तलवार को म्यान में करना चाहते हैं।

दुर्गादास — किसलिए ?

ईश्वरदास — इसलिए कि वह अपनी पोती के सम्मान को मारवाड़ की रेगिस्तानी भूमि से अधिक मूल्यवान् समझते हैं।

अजीत सिंह — इसका तात्पर्य ?

ईश्वरदास — उनका कहना है कि अब शाहजादी सफीयतुन्निसा बच्ची नहीं रही है और महाराज अजीत सिंह भी जवान हो चुके हैं। उनका सन्देहशील हृदय दो जवान हृदयों पर विश्वास करने को प्रस्तुत नहीं है। उनके सामने शाही मुगल खानदान की इज्जत का सवाल है। वह दुर्गादास जी से शाहजादा बुलंद अख्तर और शाहजादी सफीयतुन्निसा की माँग करते हैं।

दुर्गादास — और इसका मूल्य वह क्या चुकायेंगे ?

ईश्वरदास — इसके प्रतिदान में वह मारवाड़ को वह शान्ति देंगे जिसकी उसे बहुत आवश्यकता है। वह मारवाड़ से अपनी सेनाएँ हटा लेंगे।

कासिम खाँ — कदाचित् मराठों से लड़ने के लिए उन्हें अधिक सेना की आवश्यकता है ?

ईश्वरदास — कुछ भी हो मारवाड़ को साँस लेने का अवसर तो मिलेगा। सम्पूर्ण प्रदेश को कब तक श्मशान बनाकर रखना चाहते हो?

मुकुन्ददास — जब तक मारवाड़ में तलवार पकड़ने में समर्थ एक भी व्यक्ति जीवित रहेगा।

ईश्वरदास — मैं जानता हूँ राजपूतों को अपने हठ से हटाना बहुत कठिन है, लेकिन आप विश्वास रखिए यह ब्राह्मण किसी लोभ से मारवाड़ को धोखा देने नहीं आया है। यह राजपूतों की वीरता का प्रशंसक है—उनके बलिदानों का सम्मान करता है। इसकी आत्मा की पुकार है कि सम्राट् औरंगजेब से इस समय सन्धि कर लेनी चाहिए।

अजीत सिंह — शाहजादी सफीयतुन्निसा और शाहजादा बुलंद अख्तर को शेर के पंजे में सौंप कर। नहीं ईश्वरदास जी, यह विश्वासघात होगा ईरान में बैठे हुए इनके अब्बाजान के साथ। राजपूत इस कीमत पर शान्ति नहीं खरीदेंगे।

ईश्वरदास — बद अच्छा, बदनाम बुरा वाली कहावत यहाँ चरितार्थ होती है। औरंगजेब ने साँप की भाँति रेंगते हुए आकर अनेक व्यक्तियों को डसा है, उन्होंने चालाक चीते की तरह अचानक झपटकर अनेक जानें ली हैं, बहेलिए की भाँति दाने डालकर मनुष्यों को पंछियों की भाँति जाल में फाँस कर उनकी गर्दन मरोड़ी है। उनपर विश्वास करना कठिन है, लेकिन मैं कहता हूँ आप लोगों ने आज के औरंगजेब को नहीं देखा। उनकी कमर झुक गई है, हमेशा ऊपर रहनेवाला मस्तक धरती की तरफ देखने लगा है, आँखों की रोशनी कम होने के साथ उनके दिल के भीतर ज्योति जलने लगी है। वह समझ

गये हैं कि जिस सिंहासन को पाने के लिए उन्होंने हिंसा का नग्न नृत्य किया, संसार के हर नाते का गला घोंट दिया, उसी के फलस्वरूप वह पच्चीस वर्ष से दूर दक्षिण में पड़े हैं और उसपर बैठने के लिए वह वापस दिल्ली नहीं जा सकेंगे। उन्हें अपने प्रत्येक पुत्र में औरंगजेब का रूप दिखायी देता है और जब आइना देखते हैं तो उसमें शाहजहाँ नजर आता है। मैं आपसे कहता हूँ, दुर्गादास जी, मौत के किनारे पहुँच कर यह अत्याचारी मित्रता का हाथ बढ़ा रहा है तो आप उसको निराश न कीजिए। कम से कम आप शुजाअत खाँ से ही बात तो कर लीजिए।

दुर्गादास आप उन्हें मेरे पास ला सकते हैं ?

ईश्वरदास अवश्य !

दुर्गादास निस्शस्त्र और अकेले।

ईश्वरदास निस्शस्त्र और अकेले।

दुर्गादास कब ?

ईश्वरदास अभी। वह हमसे दूर नहीं है, केवल मेरी ताली के संकेत की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

[**ईश्वरदास ताली बजाता है।**]

अजीत सिंह लेकिन वह यहाँ से जीवित न जा सकेंगे। उन्होंने हमारे मारवाड़ पर कम अत्याचार नहीं किये हैं। युद्धभूमि में प्राण लेना और बात है, लेकिन गाँवों में आग लगाकर निरपराधों को ज्वाला में झोंक देना और बात है। उनका नाम सुनकर ही

मेरी आँखों में खून उतर आता है। मैं उन्हें क्षमा नहीं करूँगा।

[शुजाअत खाँ का प्रवेश। वह प्रौढ़ आयु का व्यक्ति है। इस समय साधारण वस्त्र धारण किये हुए है और निश्शस्त्र है। उसके आते ही अजीत सिंह फुर्ती से म्यान से तलवार निकालकर उस पर आघात करता है किन्तु उससे भी अधिक फुर्ती से तलवार निकालकर दुर्गादास अजीत सिंह की तलवार को अपनी तलवार पर झेल लेते हैं।]

दुर्गादास — महाराज, राजपूत निश्शस्त्र व्यक्ति पर प्रहार नहीं करता।

[अजीत सिंह क्रोध से भरी अंगारों की भाँति जलती हुई आँखों से दुर्गादास को देखता है। शुजाअत खाँ मुसकुराता है।]

[यवनिका-पतन]

दूसरा अंक

[समय—संध्या। स्थान—दक्षिण में भीमा नदी के तट पर ब्रह्मपुरी (जिसका नाम औरंगजेब ने इस्लामपुरी रखा है) नामक कस्बे में औरंगजेब के राजमहल का एक कक्ष। भीम नदी की लहरों के चट्टानी तटों के टकराने के कारण जो शब्द हो रहा है वह सम्पूर्ण दृश्य में इस प्रकार सुनायी देता रहता है, जिससे कथोपकथन को सुनने में बाधा नहीं पड़ती। कक्ष के एक कोने में एक बिछा हुआ पलंग है। पलंग के पास एक तिपाई पर कुरान शरीफ आदि पवित्र ग्रन्थ रखे हैं। एक तिपाई पर पानी से भरी हुई सुराही है। पास में बिल्लोरी कटोरा है। कक्ष के बीच पिछली दीवार से लगी हुई एक कालीन बिछी हुई है जिस पर बैठते समय सहारा लेने के लिए यथास्थान मसनद रखे हुए हैं। दीवारों पर कुछ शस्त्र टंगे हुए हैं। इसके अतिरिक्त कक्ष में विशेष कोई सजावट नहीं है। सम्राट् औरंगजेब की पुत्री मेहरुन्निसा गीत गा रही है। उसकी आयु लगभग चौंतीस-पैंतीस वर्ष की है। अंग-अंग से सौन्दर्य फूटा पड़ता है जिसमें राजसी वस्त्राभूषणों ने और भी चार चाँद लगा दिये हैं।]

मेहरुन्निसा—(गीत)

ये दीवारें रोक सकेंगी
क्या दिल का तूफान, कहो ?

आँखों का पानी तूफानी,
जब इसने बहने की ठानी।
रोक सकेगी क्या दरिया को
दुनिया की चट्टान, कहो !

ये दीवारें रोक सकेंगी
क्या दिल का तूफान, कहो ?

ओठों पर ताले डाले हैं,
दिल में भी छेदे भाले हैं।
रुक सकती है कभी जुल्म से
अरमानों की तान कहो ?

ये दीवारें रोक सकेंगी
क्या दिल का तूफान, कहो।

हँसी शमा, आये परवाने,
बढ़े खुशी से जान चढ़ाने।
रोक जवानी को सकते क्या
होने से कुरबान, कहो ?

ये दीवारें रोक सकेंगी
क्या दिल का तूफान, कहो ?

[औरंगजेब की दूसरी पुत्री जीनतुन्निसा प्रवेश करती है। इसकी आयु इक्यावन-बावन वर्ष के लगभग है। यद्यपि यह जवानी पार कर चुकी है फिर भी इस पर यह कहावत

लागू होती है कि 'खंडहर बता रहे हैं इमारत बुलंद थी'। वस्त्राभूषणों में सादगी है। चेहरे पर सौम्य भाव है।]

जीनतुन्निसा — बहन, मेहरुन्निसा !

मेहरुन्निसा — (चौंककर) ओह ! आप आपा जीनतुन्निसा। पादशाह बेगम !

जीनतुन्निसा — तू चौंकी क्यों ?

मेहरुन्निसा — मैं समझी जिन्दापीर आ गये हैं।

जीनतुन्निसा — हँसी उड़ाती है अब्बाजान की। उनके सामने तो भीगी बिल्ली बन जाती है।

मेहरुन्निसा — बनना ही पड़ता है। उनकी आँखें भूखे सिंह की आँखों की भाँति चमकती हैं—खाने को दौड़ती हैं। उनके हाथ में तलवार होती है।

जीनतुन्निसा — बाप की तलवार से बेटियों को किस बात की आशंका ?

मेहरुन्निसा — अब्बाजान बाप कहाँ हैं ? वह बेटा बनकर भी नहीं रहे तो बाप भी कैसे बन सकते थे ? भाई भी वह न बन सके।

जीनतुन्निसा — ऐसा क्यों कहती है तू ?

मेहरुन्निसा — यह भी मुझे बताना पड़ेगा। वह भी पादशाह बेगम को ? क्या कभी पूनम की रात में तुम आगरा के ताजमहल में गयी हो, जहाँ बाबाजान और दादीजान मकबरे में चिर निद्रा में सोये हुए हैं। तुमने कभी सोचा, मकबरे पर पड़नेवाली चाँदनी रोती क्यों है ? रात के सन्नाटे में दो पाक रूहें क्या नगमा

सुनाती हैं ? कभी किसी अँधेरी रात में दिल्ली में सम्राट् हुमायूँ के मकबरे में नहीं गयी, जहाँ अभागे दाराशिकोह को भी दफनाया गया है । वहाँ तुमने किसी रूह की कराह नहीं सुनी ? कभी तुम ग्वालियर के किले में नहीं गयी ! कभी मेरे श्वसुर साहब भोले-भाले मुरादबक्श की रूह से मुलाकात नहीं हुई ?

जीनतुन्निसा तेरी हुई है ?

मेहरुन्निसा हाँ, एक बार मैं गयी थी उस भयानक किले में । जब मैं उस कमरे में गयी जिसमें उन्होंने आखिरी साँसें ली थीं तो मुझे एक भयानक अट्टहास सुनायी दिया—जब चारों तरफ आँखें दौड़ायीं तो किसी को नहीं पाया । तब मेरे कानों में समुद्र के गर्जन जैसे शब्द सुनायी दिये—"ओ औरंगजेब की बेटी, अपने बाप से कह देना कि उसने अपनी बेटी का ब्याह मेरे बेटे, से कर दिया है इसलिए मैं उसे क्षमा नहीं कर दूँगा । मैं अभी मरा नहीं हूँ और उसने जितने लोगों को मारा है उनमें से कोई नहीं मरा है ।

जीनतुन्निसा यह सब तूने सपने में देखा होगा ।

मेहरुन्निसा नहीं आपाजान, यह सपना नहीं है । यह सूर्य के प्रकाश से भी अधिक सत्य है । रूह ने फिर आगे कहा—मैं कभी-कभी दिल्ली जाता हूँ, वहाँ मैं भाईजान दाराशिकोह से मिलता हूँ । उन्होंने मुझे क्षमा कर दिया है । कहा—'तुम्हें औरंगजेब ने गुमराह किया था । तुम्हारी मैं कद्र करता हूँ मुरादबक्श, कि तुम लड़ाई के मैदान में सर काटते हो—धोखे से किसी को पकड़वा कर जल्लाद से वध नहीं कराते । मेरा तुमसे कोई झगड़ा नहीं था मुराद, मेरा शुजा से भी झगड़ा नहीं था, झगड़ा था तो सिर्फ औरंगजेब से ।'

जीनतुन्निसा — तू सुन्दर कहानियाँ लिख सकती है।

मेहरुन्निसा — आप इसे कहानी समझती हैं। अब्बाजान ने आपके उन कानों के पर्दे फाड़ डाले हैं जो रूहों की बातें सुन सकते हैं। उस आवाज ने आगे कहा—"मैं अपने किसी भी भाई को बादशाहत दे सकता था। मेरी जिन्दगी का लक्ष्य तो मुसलमानों के धर्म से हिन्दुओं को परिचित कराना था और हिन्दुओं के धर्म से मुसलमानों को। जिन सार्वभौम धार्मिक तथ्यों पर सभी धर्मों में मतैक्य है और जिनको कट्टरपंथी लोग प्राय: अपने अन्धविश्वास के कारण वाह्याचरण मात्र समझते हैं उनका उद्घाटन करके हिन्दू और मुसलमानी धर्मों में समन्वय करना ही मेरे जीवन का सपना था। औरंगजेब दोनों समुदायों के बीच खाई बढ़ाना चाहता था—जो मानवता के विरुद्ध अपराध तो था साथ ही मुगल-साम्राज्य की जड़ों को हिला देने वाली कार्यवाही थी।"

जीनतुन्निसा — रहने दे मेहर! ये सब बातें—सुनाना ही है तो अब्बाजान को सुनाना।

मेहरुन्निसा — नहीं आपाजान, उनके सामने तो मेरी जबान ही नहीं खुलती। आपको ही सुनाऊँगी ताकि कभी आप उन्हें सुना सकें। उस आवाज ने आगे कहा—"मुझे दिल्ली में एक बार महाराजा जसवंत सिंह के पुत्र पृथ्वी सिंह मिल गये जिन्हें औरंगजेब ने जहरीला सिरोपाव पहना कर मार डाला था। पृथ्वी सिंह ने कहा—मैं धूर्त औरंगजेब से प्रतिशोध लिये बिना नहीं रहूँगा। मैंने मारवाड़ के हर घर में जन्म लिया है। मैं मर नहीं सकता। मुझे जितनी बार मारा जायेगा मैं उतनी बार ही जन्म लूँगा।"

जीनतुन्निसा मैं नहीं जानती थी कि तेरे दिल में अब्बाजान के लिए इतना जहर भरा हुआ है। कदाचित् ये बात तुझे तेरे खाविंद मुराद-बक्श के बेटे इरीदबक्श ने सिखायी हैं। वह शायद अभी तक अपने बाप की मौत को नहीं भूला है।

[इसी समय एक दासी जलते हुए दो शमादान लेकर आती है और कक्ष में प्रकाश करने के लिए उपयुक्त स्थानों पर रखकर चली जाती है।]

मेहरुन्निसा सभी तो औरंगजेब नहीं हो सकते, जो बाप की जिन्दगी और मौत के प्रति उपेक्षा के भाव रखें। एक चींटी के पाँव से कुचल जाने का उन्हें भले ही शोक हो लेकिन अपने बाप की मृत्यु पर ✽चिरागाँ करने में उन्हें संकोच नहीं। खैर, कुछ भी हो आज तुम्हें मेरी पूरी बात सुननी पड़ेगी। उस आवाज ने आगे कहा—मैं एक बार दक्षिण भी गया था। वहाँ मुझे संभाजी मिले थे। उन्होंने कहा—मुराद, मैं तुम्हें पसन्द करता हूँ। तुम अगर दिल्ली के तख्त पर बैठते तो मेरा तुमसे झगड़ा न होता क्योंकि हम दोनों का स्वभाव एक था। हम रणभूमि में महाकाल के अवतार रहे तो रंगमहल में अनंग के। हम जीवन को जीना जानते थे। मुझे मरने का जरा भी खेद नहीं लेकिन मैं इस बात को नहीं भूल सकता कि मेरा मुँह काला करके—मेरे गले में घंटियाँ बाँधकर ऊँट पर बिठा कर मुझे विशालगढ़ से बहादुरगढ़ तक लाया गया था—और बहादुरगढ़ में मुगल-सेना के डेरों में मुझे पैदल घुमाया गया था। मैं इसे नहीं भूलूँगा। मैं प्रतिशोध लूगा।

✽दीपमाला

जीनतुन्निसा — लेकिन बहन तू सोच कि अगर अब्बाजान संभाजी के हाथ पड़ जाते तो वह उनसे क्या व्यवहार करता ?

मेहरुन्निसा — और क्या तुम नहीं जानतीं कि सम्राट् अकबर ने अपने व्यवहार से शत्रुओं के मन को भी जीत लिया था । अब्बाजान ने संभाजी का अपमान करके मराठों को और भी हिंसक बना दिया है । संभाजी गये तो राजाराम आए—उनके सेनापति धनाजी और संताजी यम के दूत बने हुए मुगलों के छक्के छुड़ाये हुए हैं । क्या इसी तरह मुगल-साम्राज्य दृढ़ होगा ?

जीनतुन्निसा — तू अब्बाजान को मूर्ख समझती है । लेकिन मैं ऐसा नहीं मानती । और सच बात तो यह है कि मैं उनकी राजनीति पर विचार करना नहीं चाहती । मैं उन्हें केवल प्यार करना चाहती हूँ । उनकी सेवा करना चाहती हूँ । उन्होंने अपने जीवन में किसी का प्यार नहीं पाया । अब्बाजान दाराशिकोह के इस लिए शत्रु नहीं बने कि दाराशिकोह के मस्तक पर मुगल-साम्राज्य का राजमुकुट रखा जाने वाला था; इसलिए भी शत्रु नहीं बने कि दाराशिकोह को हिन्दुओं और उनके धर्म से प्यार था । वह उनके शत्रु हुए तो इसलिए कि उन्होंने अब्बाजान से बाप का प्यार छीन लिया था । प्यार से वंचित व्यक्ति अगर राक्षस बन जाये तो इसमें आश्चर्य क्या है ?

मेहरुन्निसा — लेकिन आपा आपको किसका प्यार मिला है ? आपने तो विवाह भी नहीं किया ? आप तो राक्षस नहीं बनीं ।

जीनतुन्निसा — औरतों को राक्षसी बनने का अवसर कहाँ मिल पाता है, मेहर ? और यह बात भी नहीं कि मुझे प्यार न मिला हो । कोई अब्बाजान से डरे नहीं उनके पास जायें तो सही, फिर देखे वह

कितना प्यार करते हैं ? आज मेरे अतिरिक्त उन्हें उनकी कोई भी बेटी प्यार नहीं करती। आज उनका कोई भी बेटा उन्हें प्यार नहीं करता—डरता भले ही हो। सब इस प्रतीक्षा में हैं कि कब ये आँखें मूदें और हम सिंहासन के लिए छीना-झपटी करें। और अकबर से तो उनके मरने की प्रतीक्षा करने का भी सब्र नहीं हुआ। बहन, तुम अब्बाजान के हृदय की व्यथा को नहीं समझतीं। मुझे तो उनपर दया आती है—आज कौन है जिससे वह अपने मन की बात कह सकें। उनकी बेगमात में से एक-एक कर सभी संसार से जा चुकीं - रह गयी हैं उदयपुरी बेगम।

मेहरुन्निसा और उन्हीं को तो अब्बाजान सब से ज्यादा चाहते हैं। उनके प्रत्येक अवगुण को वह सहते रहे हैं। इस्लाम का प्रसार करने के लिए ही सिंहासन पर बैठने का दम भरने वाले जिन्दापीर अपनी आँखों के आगे उन्हें शराब पीते देखते हैं—उनके सपूत कामबक्श का शराब पीना तथा दूसरी विलास-लीलाओं की तरफ से आँखें मूंदे रहते हैं। मेरे श्वसुर में इससे अधिक क्या अवगुण था आपाजान, जो अब्बाजान ने उनकी जान ली। सच तो यह है कि अब्बाजान किसी को प्यार नहीं करते सिर्फ अपने आप को प्यार करते हैं। उन्हें इस्लाम से भी प्यार नहीं है—उसे तो उन्होंने अपना हथियार बनाया है—लेकिन मुझे खेद के साथ कहना पड़ता है कि यह हथियार दुधारी तलवार है जिससे वह स्वयं भी घायल हुए हैं। भले ही वह इसके घावों को देख न पा रहे हों। उनकी नादानी के कारण आज मुगल-साम्राज्य आखिरी साँसें ले रहा है।

[**इसी समय औरंगजेब प्रवेश करता है। उसकी आयु लगभग सतहत्तर वर्ष की है। उसका कद अधिक लम्बा नहीं है, नाक**

लम्बी है, शरीर दुबला और वृद्धावस्था के कारण झुका हुआ गेहुँआँ रंग सफेद, डाढी। राजसी पोशाक, हाथ में तलवार लिये हुए है।]

औरंगजेब — मेहरुन्निसा !

मेहरुन्निसा — तस्लीम अब्बाजान !

जीनतुन्निसा — आराम फरमाएँ, अब्बाजान, मैं आपके लिए शरबत बनाकर लाती हूँ।

औरंगजेब — नहीं, आराम करना औरंगजेब के भाग्य में नहीं है। शरबत भी हम नहीं पियेंगे। बहुत कुछ पी चुके हैं।

जीनतुन्निसा — कहाँ जहाँपनाह। आप तो मेरे हाथ के अतिरिक्त किसी के हाथ का पानी भी नहीं पीते।

औरंगजेब — हाँ, हम नहीं पीते क्योंकि कौन कब पानी में जहर मिला दे इसका क्या भरोसा, जीनत ! औरंगजेब की लम्बी उम्र सबकी आँखों का काँटा हो रही है।

जीनतुन्निसा — लेकिन अभी तो हुजूर कह रहे थे............

औरंगजेब — कि हम पी चुके हैं। हाँ—हम पी चुके हैं और पी-पीकर छक गये हैं। डरो नहीं. इस बुढ़ापे में औरंगजेब ने शराब पीना शुरू नहीं किया। यह काम हमारे बापदादे करते थे—हमारे बेटे भी करते हैं—उनके बेटे भी करेंगे।

मेहरुन्निसा — तब आप क्या पीकर आये हैं।

औरंगजेब — जहर।

जीनतुन्निसा, मेहरुन्निसा — (एक साथ चिन्ता भरे स्वरों में) अब्बाजान !

औरंगजेब — डरो नहीं, औरंगजेब बातों के जहर से मरनेवाला नहीं है।

मेहरुन्निसा — बातों का जहर !

औरंगजेब — हाँ यही बातों का जहर जो बड़ी देर से तू पिला रही थी। हम बड़ी देर से बाहर खड़े थे।

[**मेहरुन्निसा औरंगजेब के चरणों में सिर झुकाती है।**]

मेहरुन्निसा — जहाँपनाह, दण्ड दीजिए। सिर कलम कीजिए। उठाइए तलवार।

[**मेहरुन्निसा का हाथ पकड़कर उसे खड़ा करता है और सिर पर हाथ रखता है।**

औरंगजेब — हाथ थक गये हैं बेटी, सिर काटते-काटते।

मेहरुन्निसा — लेकिन मुझे डर लगता है।

औरंगजेब — क्यों ?

मेहरुन्निसा — आप मेरे सर पर हाथ जो रखे हुए हैं।

औरंगजेब — हमारे हाथ जहरीले हैं ?

मेहरुन्निसा — बड़े प्यार से एकरात आपने मेरे श्वसुर को शराब पिलायी थी— वह वस्तु जिसे आप हराम समझते हैं। उसके बाद नाचनेवालियों को बुलाया था। उनके ऐश का प्रबन्ध किया था। उसके बाद क्या हुआ—आप नहीं जानेंगे तो कौन जानेगा ? एक दिन आपने महाराजा जसवंत सिंह के पुत्र को अपने हाथ से सिरोपाव पहनाया था—

औरंगजेब — लेकिन इस बूढ़े साँप के जहर के दाँत टूट गये हैं, बेटी ! तुम चाहो तो इसकी थूथरी कुचल दे सकती हो।

जीनतुन्निसा — जहाँपनाह, आपका चित्त ठीक नहीं जान पड़ता। आप आराम कीजिए।

[औरंगजेब का हाथ पकड़कर पलँग पर बैठाती है। एक पंखा लेकर हवा करती है। मेहरुन्निसा भी पास जाकर खड़ी होती है।]

औरंगजेब — जानती हो जीनत, आज हमें कैसा जान पड़ रहा है ?

जीनतुन्निसा — नहीं जहाँपनाह !

औरंगजेब — हमें ऐसा जान पड़ता है—हम आगरा के क़िले में हैं। यह जो पास में बहने वाली भीम नदी की आवाज आ रही है वह जमुना है। हम औरंगजेब नहीं हैं—बूढ़े, बीमार और भग्न हृदय शाहजहाँ हैं। तुम ऐसी जान पड़ती हो जीनत—ऐसी जान पड़ती हो मानों जहाँआरा बेगम बूढ़े बाप को पंखा झल रही है और तुम कैसी दिखायी देती हो, मेहरुन्निसा ?

मेहरुन्निसा — क्या मैं ! क्या मैं भी कुछ हूँ आपके संसार में ?

औरंगजेब — तुम ऐसी जान पड़ती हो कि सम्राट् शाहजहाँ के सामने औरंगजेब खड़ा है। उस बूढ़े शाहजहाँ के सामने जिसकी सारी आशाओं के दीपक बुझ चुके हैं। दया आ रही है दुखी बाप पर—लेकिन समझ में नहीं आ रहा कि उसे कैसे सान्त्वना दूँ !

मेहरुन्निसा — आप मेरी बातें सुनकर दुखी हो उठे हैं।

औरंगजेब — वह सब तुमने नहीं कहा—मेहर ! यह तो आवाजेखलकत* है—आज पहली बार केवल तुम्हारे मुँह से ही तो ये शब्द

---

* जनता की आवाज

नहीं सुने । ये शब्द दशों-दिशाओंमें गूँज रहे हैं—हमारे अन्तः-करण में भी हमारे हृदय की प्रत्येक धड़कन में भी......

जीनतुन्निसा — आप लेट जाइए, जहाँपनाह ! यह तलवार मुझे दीजिये ।

[औरंगजेब के हाथ से तलवार लेकर खूँटी पर टाँगती है ।]

औरंगजेब — और जानती हो हमें क्या दिखायी दे रहा है ।

मेहरुन्निसा — खुदा के वास्ते ये चिन्ताएँ छोड़िए ।

औरंगजेब — नहीं, मेहरुन्निसा ! वास्तविकताओं की तरफ से आँखें मूँद लेने भर से उनका अस्तित्व समाप्त नहीं हो जाता है तुमने हमें बहुत बातें सुनायी हैं अब कुछ हमसे भी सुनना होगा । हमें दिखायी पड़ रहा है कि हम बीमार शाहजहाँ हैं—हमारे चारों बेटे मुहम्मद मुअज्जम, मुहम्मद आजम, मुहम्मद अकबर और कामबक्श—सम्राट् शाहजहाँ के चारों बेटे दाराशिकोह; शुजा, मुराद और औरंगजेब हैं । वे चारों ही दिल्ली के तख्त पर बैठने के लिए व्याकुल हैं । अपनी अपनी सेनाएँ लेकर बढ़े चले आ रहे हैं । हम लड़ाई रोकना चाहते हैं—लेकिन हमारी कोई नहीं सुनता ! कोई नहीं सुनता ।

जीनतुन्निसा — जरा उठिए, मैं आपके कपड़े खोल दूँ ।

औरंगजेब — रहने दो जीनत, अभी हम लेटेंगे नहीं । अभी हमें बहुत काम करना है । तुम जाकर कलम-दावात और कागज लाओ ।

[जीनतुन्निसा प्रस्थान करती है ।]

औरंगजेब — अब्बाजान ने हमें चेतावनी दी थी कि उनकी बारी आने पर हमारे बेटे भी हमसे वैसा ही व्यवहार करेंगे जैसा हमने अपने अब्बाजान से किया था । तब हमने बड़े गर्व और दृढ़ता से कहा

था—खुदा की इच्छा के विरुद्ध कुछ भी नहीं होता है। जिस दुर्भाग्य का आपने उल्लेख किया है वह मेरे पूर्वजों को सता चुका है। यदि यही खुदा की इच्छा होगी तो मैं किस प्रकार इससे बच सकूँगा ? अपनी नियत के अनुसार ही प्रत्येक व्यक्ति को फल मिलता है। मुझे इस बात का पक्का विश्वास है कि मेरी नियत पूरी तरह साफ है इसलिए मुझे भरोसा है कि मुझे अपने लड़कों से सद्व्यवहार ही मिलेगा।

मेहरुन्निसा आपको ऐसा विश्वास किस आधार पर था ?

औरंगजेब हमारे विश्वास का आधार था तुम्हारा सबसे बड़ा भाई—खुदा उसे जन्नत में शान्ति दे—मुहम्मद सुलेमान। जब हमने उसे कार्यवश बन्दी अब्बाजान के पास भेजा था तब अब्बाजान ने उसे हमारी जगह शाही सिंहासन पर बैठाने की लालच दिया था—अगर वह अब्बाजान को एक बार आगरा के किले से बाहर जाने देता। तब सुलेमान ने कहा "अब्बाजान मेरे खुदा हैं मैं किसी मूल्य पर उनकी आज्ञा के विरुद्ध नहीं जा सकता।"

मेहरुन्निसा वही मुहम्मद सुलेमान शुजा से जा मिले थे—आपसे विद्रोह कर बैठे थे।

औरंगजेब हाँ; उसकी लड़की के प्रेम-जाल में फँसकर। औरत पुरुष की बुद्धि छीन लेती है। इसी तरह हम भी एक बार नारी के रूप जाल में फँसकर होश गँवा बैठे थे और हीराबाई के हाथ से शराब पीने तक के लिए तैयार हो गये थे। वह औरत चाहती तो मेरा सर्वनाश कर सकती थी।

मेहरुन्निसा तब तो भाईजान सुलेमान का अपराध भी क्षम्य था। वह

बेचारे अपनी भूल का अनुभव करके आपके पास लौट भी आए थे लेकिन आपने उनकी जान ही ले डाली ।

[इसी समय जीनत कलम दावात और कागज लाकर एक तिपाही पर रखती है ।]

औरंगजेब उसने हमारे विश्वास को आघात पहुँचाया था । उसे दण्ड नहीं देते तो हमारे दूसरे बेटे भी उसी समय विद्रोह के मार्ग पर चल पड़ते । दूसरे मुगल, तुर्क और ईरानी सरदार भी उनके देखादेखी मनमानी करते । राजसिंहासन बाप-बेटे के सम्बन्ध का लिहाज नहीं करता । शासक का हृदय लोहे का होना चाहिए ।

मेहरुन्निसा लेकिन बेटे के खून में हाथ रँगकर भी आप विद्रोह की बीमारी को रोक तो नहीं पाये ।

औरंगजेब हाँ नहीं रोक पाये । जब दुर्गादास राठौर ने अपनी चतुराई से अकबर को अपनी तरफ फोड़ कर उसे बागी बना दिया तो हम क्रोध से पागल हो उठे । हमें ऐसा जान पड़ा जैसे जमीन का कण-कण हमें चिढ़ा रहा है । हवा हमारा परिहास कर रही है—आकाश के नक्षत्र मखौल उड़ाते हैं और जब दुर्गादास अकबर को लेकर संभा जी के पास आ गये तो हम राजस्थान का संग्राम अधूरा छोड़कर दक्षिण में चले गये । हम सब कुछ सह सकते हैं — लेकिन अपने किसी बेटे का विद्रोह नहीं सह सकते । हम अब्बाजान की तरह कोमल हृदय नहीं हैं । हमें अफसोस तो इस बात का है कि हम अकबर को पकड़ नहीं सके । दुर्गादास राठौर उसकी ढाल बना रहा—और यहाँ स्थिति अनुकूल न पाकर उसे ईरान भेज दिया ।

मेहरुन्निसा और आप जो दक्षिण आये तो यहीं के होकर रह गये ।

औरंगजेब हाँ, यहीं उलझ कर रह गये। यह दुर्गादास मेरा काल बन गया। इतना चालाक है कि मारवाड़ की रक्षा करने के लिए हमें दक्षिण में उलझा दिया। मराठों की बढ़ती हुई शक्ति मुगल-सल्तनत के लिए कालदूत हो रही थी—इसे हम अनुभव करते थे, लेकिन हम नहीं समझते थे कि साम्राज्य को सुसंगठित करने में जो समय हमें लगाना आवश्यक था वह सारा युद्ध-भूमि में खपा देना पड़ेगा। मराठे बीजापुर और गोलकुण्डा के मुस्लिम राज्यों को अपनी ढाल बनाते थे—इसलिए मराठों को दबाने के पहले इन्हें समाप्त करना हमने आवश्यक समझा। मराठों ने भी अपनी तरफ से इन राज्यों को समाप्त होने से बचाने के लिए इनकी सहायता की। परिणाम यह हुआ कि मुगल-साम्राज्य की पूरी शक्ति लगा देने पर भी हमें इन राज्यों को समाप्त करने में इतने वर्ष लग गये। कहने के लिए मुगल-साम्राज्य की सीमा का विस्तार हुआ—बीजापुर और गोलकुण्डा के किलों पर मुगलों का विजयी झंडा फहरा रहा है लेकिन हम जीत कर भी पराजित हो गये हैं। हमारी कमर झुक गयी है। किसी देश को जीत लेना एक बात है—उस पर राज करना दूसरी।

जीनतुन्निसा कागज और कलम-दावात अब्बा हुजूर ने मँगवाए थे—यह शायद भूल ही गये।

औरंगजेब नहीं हम भूले नहीं हैं, जीनत ! इनका भी उपयोग होगा। पहले हम अपने अन्तस्तल में एकत्र धुएँ को तो बाहर निकाल लें। आज हमारी आँखों के आगे अन्धकार ही अन्धकार है। दक्षिण की लड़ाइयों में हमें करोड़ों योद्धाओं के प्राण लुटाने पड़े है—प्रत्येक क्षण कितनी जानों को अपनी खूनी डाढ़ों में चबाता

रहा है इसका हिसाब नहीं लगाया जा सकता। सम्राट् बाबर से लेकर सम्राट् शाहजहाँ के समय तक जितना भी धन शाही कोष में एकत्र हुआ—वह समाप्त हो चुका है। मुगल-सेना का तीन-तीन वर्ष का वेतन नहीं मिल पाता है। सेना के लिए रसद उपलब्ध करना आकाश के तारे तोड़कर लाने के सदृश कठिन कार्य हो गया है। अब्बाजान ने ताजमहल और दूसरे भव्य-भवनों के निर्माण में धन लगा कर युग-युग के लिए मुगल ऐश्वर्य और वैभव की निशानियाँ छोड़ दीं—लेकिन औरंगजेब ने उसी धन से केवल रक्त की होली खेली। नगर ग्रामों को श्मशानों में परिवर्तित कर दिया।

जीनतुन्निसा लेकिन आलीजाह ने मुगल-साम्राज्य के विस्तार को चरम सीमा तक पहुँचा दिया है। आज मुगल-शक्ति का कोई प्रतिद्वन्द्वी हिन्दुस्तान में नहीं है।

औरंगजेब **(उठकर खड़े होकर कक्ष में घूमते हुए)** संसार के सामने गर्व के साथ हम भी यही कहते हैं—लेकिन तुम्हारे सामने झूठ नहीं बोल सकते। सच पूछो तो दक्षिण की एक गज भूमि भी औरंगजेब की नहीं है। गोलकुण्डा और बीजापुर के राज्यों को मिटाकर उसने यह सारा प्रदेश मराठे रूपी पशुओं के लिए खुले चारागाह में परिवर्तित कर दिया है। संध्या के समय सिर्फ सैनिक चौकियों तक ही मुगल-सत्ता रह जाती है शेष सभी स्थानों पर मराठों का अखण्ड राज्य रहता है। यही हाल मारवाड़ में है। यही हाल बुन्देलखण्ड में है। हमारे उत्तर के प्रदेशों की भी स्थिति ठीक नहीं है। हम यहाँ वर्षों से पड़े हुए हैं—उधर सभी सूबेदार अपने-अपने प्रदेश में मनमानी करते हैं। लगान या तो प्राप्त नहीं होता—होता है तो सूबेदारों

से उसका ठीक-ठीक हिसाब पाना सम्भव नहीं है। प्रत्येक स्थान पर तो हम पहुँच नहीं सकते।

जीनतुन्निसा — मेरी बात मानें तो मैं कहूँगी। जिल्लेइलाही अब दिल्ली लौट चलें। मराठों का सिर कुचलने का काम किसी शाहजादे के कन्धों पर डालकर आप साम्राज्य में सुव्यवस्था लाने में अपना शेष जीवन लगायें।

औरंगजेब — लेकिन प्रश्न तो यह है कि कौन-सा शाहजादा अपने अब्बा का आज्ञाकारी है? आज तो हर शाहजादा अपना दल बनाकर औरंगजेब के मस्तक का राजमुकुट छीन लेने की तैयारी कर रहा है। हाल ही में कामबक्श ने मराठा राजा राजाराम से मिलकर हमारे विरुद्ध तलवार उठाने का यत्न किया था। बाध्य होकर हमें उन्हें बन्दी बनाना पड़ा।

मेहरुन्निसा — क्या सचमुच कामबक्श बन्दी बना लिये गये हैं—तो क्या अभागे कामबक्श को भी इस विद्रोह का मूल्य अपने प्राणों से चुकाना पड़ेगा?

औरंगजेब — नहीं मेहरुन्निसा!

मेहरुन्निसा — शायद इसलिए कि वह उदयपुरी बेगम के बेटे हैं—जिस उदयपुरी बेगम के......

औरंगजेब — जिस उदयपुरी बेगम के एक भृकुटि-विलास पर मुगल-साम्राज्य को भी न्योछावर करने के लिए औरंगजेब प्रस्तुत है यही कहना चाहती हो न, मेहरुन्निसा! इसमें तो संदेह नहीं कि दाराशिकोह की इस दासी ने तुम्हारे अब्बा को—एक जंगली सिंह को पालतू हिरन बना दिया है—लेकिन जहाँ मुगल-साम्राज्य के हित का प्रश्न है औरंगजेब को तलवार उठाने से कोई नहीं

रोक सकता। उदयपुरी औरंगजेब के बुढ़ापे का सहारा है—उसकी इसे जरूरत है—लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि मुगल-साम्राज्य किसी औरत के संकेतों पर चलेगा।

मेहरुन्निसा — तब क्या बात है कि......

औरंगजेब — मुहम्मद सुल्तान की जान लेने में न हिचकने वाले, अकबर पर कृपा न करने वाले, जेबुन्निसा को कारागार में बन्द रखने वाले औरंगजेब का हृदय कामबक्स के समय मोम हो गया है ? यही शंका है न तुम्हारी। बात यह है, मेहर, ज्यों-ज्यों हम बूढ़े होते जा रहे हैं—हमारे दिल में बसने वाला बाप जवान होता जा रहा है। हमारी समझ में अब आ रहा है कि क्यों अब्बा-जान ने महाराज जसवंतसिंह से कहा था कि युद्ध में औरंगजेब और मुराद की जान न जाये इस बात का ध्यान रखना। सचमुच अब्बाजान को समझने में मुझसे भूल हुई।

जीनतुन्निसा — तब शाहजादा कामबक्स के विषय में क्या व्यवस्था सोची है जहाँपनाह ने ?

औरंगजेब — हमें सिर्फ कामबक्श की ही व्यवस्था नहीं करनी हैं—सभी शाह-जादों की करनी है। सारे मुगल-साम्राज्य की करनी है। हमने जेबुन्निसा को कारागार से मुक्त करने का फरमान भेज दिया है। शाहजादा अकबर के पास हमने ईरान दूत भेजा था कि हमने उसे माफ कर दिया है, वह हिन्दुस्तान लौट आये।

मेहरुन्निसा — क्या परिणाम निकला ?

औरंगजेब — उसने कहलवाया कि वह आयेगा हिन्दुस्तान जब औरंगजेब इस संसार में नहीं होगा। लेकिन देखना है खुदा के यहाँ से किसे पहले आमंत्रण मिलता है।

जीनतुन्निसा — अब भी आपको शाहजादा अकबर पर क्रोध है।

औरंगजेब — क्यों न हो ? हमें अपने सारे पुत्रों में वह सबसे अधिक प्रिय रहा है आज भी हमारा दिल टूटता है उसके लिए। उसकी माँ उसके जन्म लेते ही मर गयी थी। इस बे-माँ के बेटे पर औरंगजेब ने अपना सारा प्यार उँडेल दिया था। लेकिन उसने अपने अब्बा की ही पीठ में छुरा भोंकना चाहा। वह अभी तक अपने अब्बा के प्यार पर भरोसा नहीं करता।

मेहरुन्निसा — तो क्या आप उन्हें माफ नहीं करेंगे। बाबाजान ने तो एक दिन आपको माफ करके आशीर्वाद दिया था।

औरंगजेब — तो तुम लोगों के कहने से हम उसे माफ करते हैं। हम दक्षिण के पवन से कहते हैं तुम ईरान जाओ—और हमारे बेटे से कहो "तुम भी बाप हो। वही भूल मत करो जो तुम्हारे बाप ने की थी। बाप का द्वार बेटे के लिए सदा खुला रहता है। खुदा तुम्हें बाप के प्यार को समझने की बुद्धि दे। उसने तुम्हारे सारे अपराध क्षमा कर दिये हैं। वह तुम्हारे कुशल के लिए खुदा से प्रार्थना करता है।

जीनतुन्निसा — अब्बाजान, आप बहुत भले हैं ?

औरंगजेब — भला होना क्या होता है, जीनत, यह जीवन के सतहत्तर वसंत पूरे कर लेने पर भी हम नहीं जान सके। बचपन में मुल्ला-सालमा खाँ और भी मोहम्मद हासिम ने जो शिक्षा मुस्लिम धर्म-ग्रन्थों की हमें दी उसी के अनुसार हमने जीवन को ढालने का यत्न किया—लेकिन जीवन के अनुभवों की पुस्तक ने कुछ और ही सिखाया। ऐसा जान पड़ता है जैसे आज तक अन्धकार में ही हम चलते रहे हैं। और इतनी दूर निकल आये हैं कि

जहाँ से चले थे मुड़कर वहाँ नहीं पहुँच सकते। अब अगर अपने परिवार को ही अपना बना सकूँ तो बहुत समझो। बहुत चाहा कि अकबर लौट आये—वह नहीं आया — लेकिन उसकी निशानियाँ हैं शाहजादा बुलंद अख्तर और शाहजादी सफीयतुन्निसा। खुदा करे— वे ही हमारे पास आ जायें।

मेहरुन्निसा — वे तो दुर्गादास जी के पास हैं।

औरंगजेब — हाँ, दुर्गादास के पास मारवाड़ में हैं।

मेहरुन्निसा — तब उन्हें कैसे पायेंगे ? तलवार की ताकत से ?

औरंगजेब — जब तक दुर्गादास के धड़ पर सिर कायम है तब तक औरंगजेब की तलवार उन्हें नहीं पा सकती। हम राठौरों के कुल-दीपक को नहीं पा सके। सोचा था उन्हें हरम में पालकर मुसलमान बनाकर जोधपुर की गद्दी पर बैठायेंगे—लेकिन दुर्गादास हमारे मुँह पर करारा तमाचा मारकर अजीत सिंह को छीन ले गया और इससे भी अपमान-जनक बात यह है कि मुगल-राजवंश की इज्जत सफीयत के रूप में उसके पास धरोहर है।

जीनतुन्निसा — यह तो बड़ी गंभीर समस्या है। मुगल शाहजादी शत्रुओं के हाथ में रहे—और विशेषतः जब उसकी उम्र विवाह के योग्य हो जाये—यह तो बहुत खतरे की बात है।

औरंगजेब — तभी तो हमने दुर्गादास को अपने पास बुलाया है।

मेहरुन्निसा — लेकिन क्या वह आयेंगे ?

औरंगजेब — आयेगा क्या वह आ चुका है।

मेहरुन्निसा — आ चुके हैं। शिवाजी के मुगल-राजसभा में उपस्थित होने का उदाहरण सामने होने पर भी वह आये हैं। आश्चर्य !

औरंगजेब — इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं, मेहरुन्निसा ! दुर्गादास अन्य राजपूतों की तरह केवल तलवार चलाना ही नहीं जानता। उसका दिमाग भी चलता है। वह सफीयत और बुलंद अख्तर को साथ लेकर नहीं आया। जब तक वे मारवाड़ में हैं दुर्गादास का सिर सुरक्षित है इसे वह जानता है। वह जानता है कि हम दुर्गादास के सिर से सफीयत की इज्जत जो मुगल-राजवंश की इज्जत है, अधिक मूल्यवान समझते हैं। वह हमसे सौदा करने आया है। हमने उसे यहीं बुलाया है। उसके आने में कुछ देर है तब तक जीनत, तुम हमारा वसीयत लिखो।

जीनतुन्निसा / मेहरुन्निसा — (दोनों एक साथ) वसीयत ?

औरंगजेब — डरो मत ? औरंगजेब के इस जगत से कूच करने का डंका अभी नहीं बजा।

जीनतुन्निसा — अभी मुगल-साम्राज्य को और आपके बच्चों को आपकी कृपा की छाया वर्षों चाहिए।

औरंगजेब — हम मानते हैं कि मुगल-साम्राज्य को हमारी आवश्यकता है—बल्कि उसके लिए जीवित रहना हमारे लिए आवश्यक है ताकि शासन-यन्त्र के जो पुर्जे युद्धों के धक्कों से ढीले हो गये हैं, उन्हें हम कस सकें। उन्हें कसने का अवसर पाये बिना अगर हमने आँखें मूँद लीं तो इस यन्त्र को चला सकना असम्भव हो जायगा। शाहजादे इस यन्त्र पर अधिकार करने के प्रयत्न में इसके टुकड़े टुकड़े कर डालेंगे। लेकिन शाहजादों को मेरी छत्रछाया की आकांक्षा है यह सोचना भ्रमपूर्ण है। हाँ, तो लिखो, जीनत !

जीनतुन्निसा — लेकिन यह अमंगल-सूचक कार्य······

औरंगजेब करते हुए तुम्हारा दिल काँपता है। जीनत, प्रत्येक व्यक्ति गिनी हुई साँसें लेकर संसार में आता है। पहले से वसीयत लिख देने से तुम्हारे अब्बा को एक भी साँस का घाटा होनेवाला नहीं है। तुमने तो लाहौर में मलिका नूरजहाँ का मकबरा देखा है वह उन्होंने अपने जीवन-काल में ही बनवा दिया था—और बनवाने के पश्चात् वह वर्षों जीवित रहीं। हम तो केवल वसीयत लिखवा रहे हैं। लिखो बेटी, उठाओ कलम !

[जीनतुन्निसा कागज लेती है। कलम उठाकर दावात में डालती है।]

औरंगजेब लिखो—

मैं खुदा की बन्दना करता हूँ। उसके जो सेवक स्वयं पवित्र हो गये हैं उन्हें मैं आशीर्वाद देता हूँ। मेरी वसीयत और मृत्यु-लेख के रूप में मेरे कुछ निर्देश ये हैं।

(१) अन्याय में डूबे हुए इस पापी की ओर से हसन की—खुदा उन्हें शान्ति प्रदान करे—पवित्र कब्र पर चादर चढ़ाना, क्योंकि पाप के सागर में डूबे हुओं के लिए दया और क्षमा के उस स्रोत का सहारा लेने के अतिरिक्त उनकी रक्षा का दूसरा कोई उपाय नहीं है।

मेहरुन्निसा अब्बाजान, आप तो हमें डराते हैं।

औरंगजेब इसमें डरने की क्या बात है ? एक दिन सबको जाना होता है। आगे लिखो जीनत !

(२) मेरी सी हुई टोपियों की कीमत से प्राप्त आमदनी में से बचे हुए चार रुपए दो आने महालदार आलाबेग के पास हैं। उससे लेकर वह रकम इस असहाय प्राणी का कफन मोल

लेने में व्यय की जाये। कुरानशरीफ की नकल द्वारा अर्जित तीन सौ पाँच रुपए मेरे व्यक्तिगत व्यय के लिए मेरे बटुए में हैं। मेरी मृत्यु के दिन उन्हें फकीरों को बाँट देना।

(३) सच्चे मार्ग से बहककर दूर पथभ्रष्टों की घाटी में इस भटकने वाले को खुले सिर ही गाड़ देना क्योंकि जो कोई भी बरबाद पापी उस सम्राटों के सम्राट के सामने खुले सिर पहुँचता है, वह अवश्य ही उसकी दया का पात्र बन जाता है।

[जीनत की आँखों में आँसू आ जाते हैं। एक दो आँसू कागज पर गिरते हैं। जिसकी आवाज से औरंगजेब का ध्यान उसकी तरफ जाता है।]

औरंगजेब — रो रही हो जीनत—केवल हमारी काल्पनिक मृत्यु पर! आज हमें इस बात का तो सन्तोष हुआ कि अगर हम सचमुच मर गये तो कोई तो हमारे लिए आँसू बहानेवाला होगा। अधिकांश लोग तो हमें मनुष्य-देहधारी भीषण अभिशाप ही समझते हैं। खैर, पोंछ डालो आँसू—लिखो आगे—

(४) मेरी अर्थी पर के कफन को गजी नामक सफेद मोटे कपड़े से ढाँकना। उसपर तम्बू खड़ा नहीं किया जाये। गायकों सी नयी रस्में न करना। पैगम्बर के मौलाद समान कोई उत्सव भी नहीं मनाना।

(५) मेरे पुत्रों में से जो भी साम्राज्य का उत्तराधिकारी बने उसके लिए उचित होगा कि इस निर्लज्ज प्राणी के साथ जो बेचारे सेवक राजस्थान की मरुभूमि और दक्षिण के उजाड़ जंगलों में मारे-मारे फिरते रहे हैं, उनके प्रति दयापूर्ण व्यवहार करे। उन्होंने प्रकट रूप से अपराध भी किये हों तब भी दया-

लुता दिखा उनके अपराधों की उपेक्षा कर उदारतापूर्वक उन्हें क्षमा ही प्रदान करे।

मेहरुन्निसा — सम्भवतः इसी कारण आप भी कामबख्श को क्षमा करना चाहते हैं।

औरंगजेब — मैं आज सब को क्षमा कर देना चाहता हूँ—नहीं तो खुशी से अपने अपराधों के लिए क्षमा माँगने का साहस कैसे कर सकूँगा। (जीनत से) हाँ, बेटी आगे लिखो—

(६) कभी अपने पुत्रों का विश्वास न करो और न अपने जीवन-काल में ही उनके साथ घनिष्टता का बर्ताव करो।

जीनतुन्निसा — जिल्लेइलाही, वह तो बड़ा कठोर आदेश दिया है आपने।

औरंगजेब — सिर पर राजमुकुट धारण करना और साम्राज्य की रक्षा करना सरल नहीं है। औरंगजेब, शुजा और मुराद का मन विद्रोही बना इसका मुख्य कारण हमारी महत्त्वाकांक्षाएँ या स्वार्थ-भावनाएँ नहीं थीं। मुख्य कारण अब्बाजान का अपने सब पुत्रों की अपेक्षा दारा से अधिक प्रेम होना था। इसमें भी सन्देह नहीं कि मुगल-साम्राज्य की नैया जो आज डाँवाडोल हो उठी है उसके लिए औरंगजेब अपराधी है। लेकिन औरंगजेब को उन्मत्त कर देनेवाले अब्बाजान ही थे। अपने सभी बेटों को वह अपने से दूर रखते तो सभी साम्राज्य के सेवक बनकर रहते।

मेहरुन्निसा — क्षमा कीजिए जहाँपनाह आपके पुत्र जो गृह-कलह की तैयारियाँ कर रहे हैं—मुगल-साम्राज्य के रहे-सहे सम्मान और बल को समाप्त करने की योजना बना रहे हैं इसमें अपराध किसका है ? आपने तो कभी अपने किसी पुत्र को अपने पास नहीं आने दिया।

मन में चाहे कुछ हो कम से कम ऊपर तो प्रकट नहीं किया। मैं समझती हूँ—आपके सोचने में कहीं न कहीं कुछ भूल है।

जीनतुन्निसा — जिल्लेइलाही से ऐसा कहा जाता है ?

मेहरुन्निसा — आज जहाँपनाह ने सब को क्षमा प्रदान करने का निश्चय किया है इसलिए मुझे उनके सामने बोलने का साहस हुआ है। मैं तो कहूँगी—अब्बाजान यह वसीयत करें कि उनके बाद जो भी तख्ते-ताऊस पर बैठे वह अपने एक पुत्र के अतिरिक्त शेष की जान ले ले।

जीनतुन्निसा — कैसी भयानक औरत है तू ?

मेहरुन्निसा — औरत होने का अर्थ अन्धी होना नहीं है आपा ! आपने तो विवाह ही नहीं किया। अब्बाजान की सेवा करना ही आपकी सम्पूर्ण जिन्दगी है—अभिलाषाओं की सीमा है—लेकिन मैं तो माँ भी हूँ। माँ के लिए सन्तान का अर्थ क्या है इसे समझती हूँ। फिर भी कहती हूँ—सम्राट् को अपने एक पुत्र और एक-पुत्री के अतिरिक्त शेष सारी सन्तानों का गला घोंट देना चाहिए।

जीनतुन्निसा — क्यों।

मेहरुन्निसा — इसलिए कि बाद में उन्हें मरना ही पड़ता है। पुत्रियाँ भले ही जी लें लेकिन पुत्रों को तो मरना ही पड़ता है। उनके बड़े होकर मरने से उनकी पत्नियाँ बे-सहारा हो अपमान सहती हैं—उनके बच्चे अनाथ हो जाते हैं। उन्हें क्यों दण्ड दिया जाये ?

औरंगजेब — और क्या चाहती है वसीयत में तू ?

मेहरुन्निसा सम्राट् बनने वाला व्यक्ति एक से अधिक विवाह न करे।

जीनतुन्निसा क्यों ?

मेहरुन्निसा इसलिए कि हर बेगम सम्राट् पर राज्य करना चाहती है और चाहती है कि उसका ही पुत्र सम्राट् बने। इसलिए राजमहलों के अन्तःपुर में षड्यन्त्र पलते हैं जिसकी शाखाएँ बाहर फैलती हैं—उनमें भयानक संग्रामों के फल लगते हैं।

औरंगजेब और क्या चाहती है वसीयत में तू ?

मेहरुन्निसा और यह कि राज्य में एक से अधिक धर्मों को मानने वाले लोग रहते हैं तो सम्राट् को चाहिए कि उनमें से एक धर्म के अतिरिक्त मानने वाले—प्रत्येक व्यक्ति को—बूढ़ा-जवान-बच्चा-पुरुष और स्त्री सबको मरवा डाले।

जीनतुन्निसा यह भी कहीं सम्भव है ?

मेहरुन्निसा सम्भव नहीं है, तो सम्राट् को चाहिए कि वह किसी भी धर्म से अपना सम्बन्ध न रखे। वह यह न करे कि मस्जिदें बनवाये और मन्दिरों को तुड़वाये या मन्दिरों को बनवाये और मस्जिदों को तुड़वाये। उच्च पदों पर धर्म के आधार पर नहीं योग्यता के आधार पर नियुक्तियाँ करे। सभी धर्मों के अनुयायियों पर समान कर लगाये जायें और समान सुविधायें उन्हें दी जायें। जहाँपनाह, सम्राट् के लिए प्रजा के सब लोग उसकी सन्तान हैं। एक सन्तान से प्यार और दूसरी से घृणा करने का परिणाम साम्राज्य-रूपी परिवार के सर्वनाश के अतिरिक्त कुछ नहीं हो सकता।

औरंगजेब आज तेरी जबान पर दाराशिकोह आ बैठा है !

—इक्यासी—

मेहरुन्निसा — नहीं जिल्लेइलाही, मेरी जबान पर दाराशिकोह नहीं, हजरत मोहम्मद साहब बैठे हुए हैं— जिनका नाम लेकर स्वार्थी धर्म-गुरुओं ने आपको गुमराह किया है।

[इसी समय एक दासी प्रवेश करती है।]

दासी — जिल्लेइलाही शाहंशाहे-हिन्द को दासी कोर्निश करती है।

औरंगजेब — क्या बात है ?

दासी — ईश्वरदासजी दुर्गादास राठौर को लेकर आये हैं।

औरंगजेब — उन्हें यहीं उपस्थित करो।

[दासी का प्रस्थान]

औरंगजेब — तो आज यह वसीयत पूरी लिखी जा सकेगी। मेहरुन्निसा, तुमने हमारे दिल के तारों को झनझना डाला है। हमारी नस-नस को झकझोर डाला है। आज तक कोई हमारे सामने इतने आत्मविश्वास के साथ नहीं बोला। सब हमारी तलवार से डरते रहे। तुम भी अब बोली हो जब हम कब्र की तरफ कदम बढ़ा चुके हैं। हमसे भिन्न मत रखने वाले—हमारे सामने या तो चुप रहे या फिर एकदम तलवार लेकर खड़े हो गये। औरंगजेब किसी की तलवार का रोब नहीं मान सकता था— न आज मानेगा। अच्छा, अभी तो तुम जाओ—वे लोग आ रहे हैं।

[औरंगजेब कालीन पर बीच वाले मसनद के सहारे बैठता है। एक तरफ से जीनतुन्निसा और मेहरुन्निसा जाती हैं। दूसरी तरफ से ईश्वरदास और दुर्गादास आते हैं दुर्गादास की कलाइयों को रूमाल से इस तरह

बाँधा गया है कि जान पड़े वह हाथ जोड़े हुए हैं। और वह निश्शस्त्र हैं।]

ईश्वरदास — शाहंशाहे-हिन्द आलमगीर पातशाह गाजी के हुजूर में सेवक ईश्वरदास कोर्निश बजाता है। आपकी आज्ञानुसार दुर्गादास जी को लेकर मैं उपस्थित हुआ हूँ।

औरंगजेब — यह क्या तुमने राठौर वीर के हाथ बाँध रखे हैं और राजपूत के शस्त्र भी छीन लिये हैं।

ईश्वरदास — अपराधी को सम्राट् के सम्मुख उपस्थित करने का यही नियम है। सेवक नियम का उल्लंघन कैसे कर सकता था।

औरंगजेब — और दुर्गादास तुमने हाथ बँधवाना कैसे स्वीकार कर लिया?

दुर्गादास — मैं जहाँपनाह के हुजूर में रह चुका हूँ—राजसभा के नियमों को जानता हूँ, जब बचन-बद्ध होकर मारवाड़ से ब्रह्मपुरी तक आ ही गया हूँ तो बिना विशेष कारण झगड़ा नहीं करूँगा।

औरंगजेब — इस शहर का नाम ब्रह्मपुरी नहीं इस्लामपुरी है।

दुर्गादास — आपने दुर्गादास का नाम भी दौलतबेग रख लिया हो तो क्या? दुर्गादास, दुर्गादास ही रहेगा। हिन्दुस्तान को आप अरब या ईरान नहीं बना सकते। हम तो ब्रह्मपुरी को ही जानते हैं—इस्लामपुरी को नहीं।

औरंगजेब — तुम्हारी जबान को हम बन्द नहीं कर सकते तो तुम्हारे हाथ भी क्यों बँधे रहें।

[औरंगजेब उठकर अपने हाथ से दुर्गादास के हाथ खोलता है।]

औरंगजेब — शस्त्र चाहते हो तो वह भी दिये जा सकते हैं।

दुर्गादास — राठौर के हाथ में शस्त्र का होना खतरे से खाली नहीं होता जहाँपनाह ! महाराजा जसवन्त सिंह के अग्रज महाराज अमरसिंह सम्राट् शाहजहाँ के सम्मुख इसका उदाहरण उपस्थित कर चुके हैं।

औरंगजेब — राठौरों की तलवार की औरंगजेब भी प्रशंसा करता है—लेकिन उनसे भयभीत नहीं होता। साथ ही यह भी जानता है कि दुर्गादास तलवार चलाने में महाराज अमरसिंह से कम कुशल नहीं है—लेकिन वह उनकी तरह उतावला नहीं है। वह तलवार चलाना तो क्या आँखें झपकाने का काम भी आगा-पीछा सोचकर करता है।

दुर्गादास — फिर भी जहाँपनाह, राठौरों का रक्त स्वभावतः गरम होता है। इसे न भूलिए।

औरंगजेब — किसी बात को भूलना औरंगजेब नहीं जानता। राठौरों को मित्र के रूप में भी और शत्रु के रूप में भी उसने देखा है—लेकिन दुर्गादास तुम्हें पहचान पाना उसके वश की बात भी नहीं। तुम्हारा अन्तःकरण जिस समय क्रोध के पारावार की उत्ताल तरंगों से विचलित रहता है तब भी तुम्हारी आँखों के रंग में अन्तर नहीं आता। तुम बहुत भयानक हो, दुर्गादास !

दुर्गादास — जहाँपनाह से अधिक नहीं।

औरंगजेब — नहीं दुर्गादास, इस सम्बन्ध में हम तुमसे हार मानते हैं। आज से बीस वर्ष पहले जब दिल्ली में तुम अपने साथियों के साथ हमारे हुजूर में उपस्थित हुए थे—हमसे राजकुमार अजीत सिंह

को जोधपुर की गद्दी का स्वामी स्वीकार कराने के लिए—तब से हमने तुम्हें पहचाना है। हमने जब अजीत सिंह को हमारे संरक्षण में पालने के लिए तलब किया—तो तुम्हारे साथियों के हाथ तलवारों की मूठों पर जा पहुँचे थे – लेकिन तुम महासिन्धु की भाँति गम्भीर थे। तुमने शान्त स्वर में कहा था—"मुझे महारानी जी से पूछना होगा।"

दुर्गादास महारानी जी से पूछना उनके सेवक का कर्त्तव्य था। कोई भी महत्वपूर्ण निर्णय सेवक कर ही कैसे सकता था ?

औरंगजेब नहीं, तुम सेवक नहीं, उस समय मारवाड़ के वास्तविक राजा थे—मारवाड़ के ही नहीं सम्पूर्ण राजस्थान की नैया के कर्णधार थे। तुम्हारा निर्णय ही रानी जी का निर्णय होता। तुमने उस समय रानी जी की आड़ केवल इस कारण ली कि इस बहाने तुम हमारे चंगुल से निकल जाना चाहते थे।

दुर्गादास यह बात तो, जहाँपनाह, उस समय भी जानते थे—लेकिन आपको अपनी विशाल सेना पर विश्वास था—गर्व था। मुट्ठी भर राजपूत राजकुमार को लेकर—मुगल-सेना को चीरते हुए—तीरों की तरह निकल जायेंगे इसकी आशंका आपको नहीं थी। आप महारानी जी, एवं उनके मुझ जैसे सेवकों को विश्वास दिलाना चाहते थे कि हाथ में आए हुए शत्रु को बन्दी न बनाने का अर्थ है कि बादशाह सलामत राजकुमार अजीतसिंह से छल नहीं करेंगे।

औरंगजेब किन्तु आज तो दुर्गादास हमारे हाथ में हैं। अब तुम हमारे चंगुल से नहीं छूट सकते हो। औरंगजेब बार-बार एक ही प्रकार की भूल नहीं करता।

ईश्वरदास — किन्तु, जहाँपनाह, आपके आदेशानुसार मैं पूर्ण सुरक्षा का विश्वास देकर इन्हें यहाँ ला पाया हूँ। मेरे दिये हुये बचन का, जो वास्तव में आपका वचन है।

औरंगजेब — चुप रहो, ईश्वरदास ! राजनीति में वचन-पालन से बड़ी मूर्खता दूसरी कोई नहीं है। बोलो, दुर्गादास, अब तुम क्या कर सकते हो ?

दुर्गादास — कुछ नहीं, जहाँपनाह ! जल्लाद की तलवार के नीचे अपनी गर्दन कर देने के अतिरिक्त और क्या कर सकता हूँ मैं ?

औरंगजेब — तो तुम जीवित नहीं रहना चाहते ?

दुर्गादास — राजपूत को मृत्यु का भय दिखाना व्यर्थ है, जहाँपनाह ! लेकिन दुर्गादास जानता है कि आपको इस समय मेरे प्राणों की चाह नहीं है।

औरंगजेब — ऐसा तुम क्यों समझते हो ?

दुर्गादास — इसलिए कि औरंगजेब हत्यारा होते हुए भी हिसाबी है। यह व्यापारी की भाँति गणित लगाता है। दुर्गादास जानता है कि जहाँपनाह मुझे मारकर भी अपना मनोरथ पूरा नहीं कर सकते। जीवित दुर्गादास की अपेक्षा मृत दुर्गादास मुगल-साम्राज्य के लिए अधिक खतरनाक है।

औरंगजेब — क्यों ?

दुर्गादास — जब तक मारवाड़ को दुर्गादास की आवश्यकता थी, उसने जीवित रहने का यत्न किया, लेकिन स्वाभिमान को बेचकर नहीं, क्योंकि स्वाभिमान को बेच देना ही वास्तविक मृत्यु है। स्वाभिमान को जीवित रखते हुए मर जाना अमर हो जाना है।

औरंगजेब — अच्छा तुम हमें यह बताओ कि तुम हमारे मित्र हो या शत्रु ?

दुर्गादास — मित्र ?

औरंगजेब — मित्र ! फिर भी हमारे विरुद्ध बीस वर्ष से तुम तलवार चला रहे हो।

दुर्गादास — आपसे मित्रता करने का दूसरा उपाय भी तो नहीं है।

औरंगजेब — क्या तलवार से मित्रता स्थापित होती है ?

दुर्गादास — तो, आलीजाह, क्या तलवार से किसी धर्म का विस्तार होता है।

औरंगजेब — इस विषय में दो मत हो सकते हैं ?

दुर्गादास — किन्तु इस विषय में दो मत नहीं हो सकते कि भय के बिना मित्रता नहीं होती। आपने मारवाड़ के स्वाभिमान को छेड़ने का साहस केवल इसलिए किया कि आप मानते थे कि विशाल मुगल-वाहिनी से लोहा लेने का दुस्साहस छोटा सा प्रदेश नहीं कर सकेगा। दुर्गादास को आज भी मुगल-साम्राज्य का मित्र बनकर रहने का मोह है, इसलिये उसने दिखा दिया है कि तलवार का उत्तर तलवार से देने में राठौर कमजोर नहीं है। मैं ईश्वरदास जी के साथ यों ही नहीं चला आया। मुगल-साम्राज्य की मित्रता प्राप्त करने की पात्रता की परीक्षा में मारवाड़ सफल हो गया है। दुर्गादास जानता है कि अपने अन्तःकरण से सम्राट् मारवाड़ की मित्रता चाहते हैं।

ईश्वरदास — जहाँपनाह, सेवक को क्या आज्ञा है ?

औरंगजेब — हाँ, हम भूल ही गये थे कि तुमने पुरस्कार पाने का कार्य किया है। जिस सिंह का हमारी तलवार बाल भी बाँका न कर सकी उसे तुम्हारी जबान पींजरे में बन्दे करने में सफल हुई है।

[ईश्वरदास की आंखें लाल हो उठती हैं। उसका हाथ तलवार पर जाता है।]

ईश्वरदास   जहांपनाह, ईश्वरदास के जीवित रहते दुर्गादास जी का आप कुछ न बिगाड़ सकेंगे ?

दुर्गादास   शान्त, ईश्वरदास जी ?

ईश्वरदास   मैं शान्त कैसे रहूं ? इतिहास मेरे नाम पर थूकेगा कि मैं छल-प्रपंच से फंसाकर दुर्गादास जी को लाया और उनकी मृत्यु का कारण बना। युग-युग के लिए कलंकित होने की अपेक्षा अपने रक्त से इस कलंक को धो देना श्रेयकर है। जहांपनाह, यदि आप चाहते हैं कि ईश्वरदास आपका वफादार सेवक बना रहे तो दुर्गादास जी को वापस मारवाड़ जाने दीजिये।

औरंगजेब   (हंसता है) हः हः हः, ईश्वरदास ! हम यह जानकर खुश हुए कि तुम केवल दूत का ही काम नहीं कर सकते, तलवार भी उठा सकते हो, लेकिन नहीं जानते, तुम्हारी तलवार यहां दुर्गादास की रक्षा नहीं कर सकती, वह तुम्हारी अपनी ही गर्दन पर गिरेगी।

ईश्वरदास   मुझे प्राणों का मोह नहीं है, जहांपनाह !

औरंगजेब   लेकिन हम तो तुम्हारे प्राणों का मोल जानते हैं, आपके कौशल का सम्मान करते हैं। आपको अपना मित्र मानते हैं।

ईश्वरदास   आपकी मित्रता तो क्या मनुष्यता पर से मेरा विश्वास उठ रहा है।

औरंगजेब   हः हः हः, तो ईश्वरदास, तुम्हें मानना होगा कि औरंगजेब

बहुत अच्छा नाटक खेल सकता है। लोग समझते हैं कि हम कलाओं के शत्रु हैं, लेकिन वे हमारी कलाओं को नहीं जानते। हमें जानने वाला केवल एक व्यक्ति है और वह है, दुर्गादास! शिवाजी से हम कभी भयभीत नहीं हुए। संभाजी हमारे सामने बच्चा था, बेचारे का बहुत बुरा अन्त हुआ, लेकिन देखो यह दुर्गादास हमारे सामने कैसा निश्शंक और निर्भय खड़ा है। ध्रुवतारे की भाँति स्थिर। पर्वत की भाँति अडिग। यह व्यक्ति दिल्ली के तख्त पर बैठने के योग्य है।

दुर्गादास — दिल्ली के तख्त से ऊँचा सिंहासन है एक, दुर्गादास ने केवल उसपर बैठने का यत्न किया है। आप भी उसपर बैठने का यत्न कीजिये।

औरंगजेब — कौन सा सिंहासन है वह ?

दुर्गादास — अपने देशवासियों के हृदय का सिंहासन! जो सम्राट् इस सिंहासन को गँवा देता है, उसे नहीं तो, उसकी भावी पीढ़ी को राजसिंहासन भी गँवाना पड़ता है। आप अनुभव नहीं कर रहे हैं कि आप जिस सिंहासन पर विराजमान हैं उसके नीचे एक प्रसुप्त ज्वालागिरि फट पड़ने के लिए आतुर है। इस ज्वाला को शान्त कीजिये अपने प्रेम से।

औरंगजेब — लेकिन औरंगजेब प्रेम को मनुष्य की दुर्बलता मानता है। वह प्रेम नहीं शासन करना जनता है।

दुर्गादास — तो शासन ही कीजिए जहाँपनाह, शासन यदि सुशासन हो तो प्रजा उसे राजा का प्यार और भगवान का वरदान मानती है। कहाँ है वह सुशासन औरंगजेब के राज्य में। कभी आपने

ध्यान दिया है कि आपके राज्य में तीन-तीन चार-चार दिन यात्रा करने पर भी रात के समय मार्ग में एक भी दीपक जलता नहीं दिखायी देता, कहीं लहराते हुए खेत नहीं दिखायी देते, गाँवों और नगरों की समृद्धि समाप्त हो गयी है। जहाँ भी दृष्टि दौड़ाओ मनुष्यों और पशुओं की हड्डियाँ ही दिखायी देती हैं। शासक स्वयं डाकू और हत्यारा बना हुआ है तब प्रजा किससे पुकार करे?

औरंगजेब — युद्ध-काल में शासन में अव्यवस्था आ ही जाती है।

दुर्गादास — प्रजा ने कब कहा था कि आप युद्ध कीजिए। आपसे किसने कहा था कि प्रजा के एक भाग पर आप कृपा की वर्षा करें और एक पर अत्याचारों की बिजली गिरायें। मरता क्या नहीं करता, पीड़ित प्राणों को विद्रोही बनना ही पड़ा। जहाँपनाह, मुगल-साम्राज्य ऐसा विशाल रथ है जिसे हिन्दू और मुसलमान रूपी दो बलवान हाथी खींच रहे थे। किसका साहस था जो इस रथ की गति में अवरोध उपस्थित करता। आपने रथ के एक हाथी को रथ से अलग कर दिया और उसे भूखा-प्यासा रखकर आप उसे मार डालना चाहते हैं। वह हाथी चुपचाप मरने के लिए प्रस्तुत नहीं है। जिस रथ को वह अपने बलशाली स्कन्धों पर लादे फिरा है, आज वह उसे ही चूर-चूर कर देने को प्रस्तुत है। वह रथ को ही नहीं, रथ में बैठे हुए लोगों को भी टुकड़े-टुकड़े कर डालेगा।

औरंगजेब — और दूसरा हाथी?

दुर्गादास — आपने दोनों हाथियों को लड़ाने का यत्न किया है। तो ये हाथ लड़ेंगे लड़ते रहेंगे। इनके पाँवों के नीचे निरपराध व्यक्ति कुचले जायेंगे। साम्राज्य का रथ अपनी जगह खड़ा रहेगा,

खड़ा रहेगा। उसके पहियों को दीमक खा लेगी, वह नष्ट हो जायेगा।

औरंगजेब — लेकिन, दुर्गादास, हम जानते हैं कि राजा का कर्तव्य है कि वह अपनी प्रजा को सूखी रखे, शान्ति दे, व्यापार-धन्धों को बढ़ायें, उसको न्याय प्रदान करे। हमें इस बात का वास्तव में दुख है कि आज साम्राज्य में सुख-शान्ति का अभाव है। हमें खुदा ने अवसर दिया तो हम साम्राज्य की सुख-समृद्धि को लौटा लाने का यत्न करेंगे। निरन्तर संग्राम करते रहना मनुष्य का स्वाभाविक जीवन नहीं है। हमने खुद अपनी आँखों से देखा है कि दक्षिण की लड़ाइयों में प्रतिवर्ष एक लाख मनुष्य, और हाथी, घोड़े, ऊँट, बैल आदि मिलाकर तीन लाख पशु मरते रहे हैं। जब गोलकुण्डा में अकाल पड़ा तो सतहत्तर कोसों तक मुर्दों के ढेर से दीख पड़ते थे। यह सब देखकर हमारी आत्मा काँप उठी है।

दुर्गादास — धन्यवाद है ईश्वर को जिसने जहाँपनाह को इतना अनुभव करने की बुद्धि तो दी कि संग्राम करते रहना ही स्वाभाविक जीवन नहीं है, लेकिन जहाँपनाह यह संग्राम का चक्र क्या आपके रोके रुकेगा ? पहला प्रश्न तो यह है कि क्या आप रोकना चाहेंगे ?

औरंगजेब — रोकना क्यों नहीं चाहेंगे ? लेकिन औरंगजेब के मस्तिष्क में अपने शासन की अपनी ही रूप-रेखा है। उसकी किसी वर्ग से शत्रुता नहीं है, लेकिन यह नहीं हो सकता कि किसी वर्ग को सन्तुष्ट रखने के लिए वह अपने आदर्शों को बदल दे।

दुर्गादास — लेकिन जहाँपनाह जिन आदर्शों के पालन में आप इतनी दृढ़ता दिखाते हैं, सम्भव है कि उनको समझने में आपसे भूल हुई

हो। ऐसे किसी भी सिद्धान्त को आदर्श नहीं कहा जा सकता जो मनुष्यता के विरुद्ध हो। आपने राज्य और धर्म का गठ-बन्धन करके ऐसी भूल की है जिससे सर्वसाधारण का जीवन विषाक्त हो गया है। यह भारत है। यहाँ एक धर्म के लोग नहीं रहते। यदि एक धर्म को राज-धर्म के पद पर आसीन किया जाता है और दूसरे धर्मवालों के अधिकार केवल इसलिए छीने जाते हैं कि वह राज-धर्म को नहीं मानते तब संघर्षों और संग्रामों का तो जन्म होगा ही। निरन्तर संघर्ष-रत रहने का परिणाम सभी वर्गों का सर्वनाश है। देश की शक्ति छिन्न-भिन्न हो जायगी। जैसे हिन्दुओं ने आपस में संघर्ष करके आप लोगों के लिए मार्ग साफ किया उसी प्रकार भारत के आज के प्रमुख वर्ग परस्पर युद्ध करके फिर किसी नवीन विदेशी शक्ति को भारत पर आक्रमण करने की प्रेरणा देंगे।

औरंगजेब — औरंगजेब विदेशियों से लोहा लेने में समर्थ है।

दुर्गादास — औरंगजेब की दृढ़ता और वीरता का दुर्गादास भी कायल है। उसने बलख बुखारा जैसे सुदूर स्थानों पर उसकी तलवार का चमत्कार देखा है; लेकिन जहाँपनाह, औरंगजेब के पीछे मुगल-साम्राज्य की जो सुदृढ़ शक्ति थी वह आज समाप्त हो चुकी है। आपने सिंहासन पर बैठने के लिए, और बैठने के बाद साम्राज्य और अपने धर्म के प्रसार के लिए जो चालीस-पैंतालीस वर्ष से संघर्ष जारी रखा है उसने मुगल-शक्ति के पुर्जे ढीले कर दिये है। अब जो युद्ध भारत के कोने-कोने में हो रहा है, वह राजा का राजा के साथ युद्ध नहीं रहा। अब सर्वसाधारण ने इस युद्ध का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया है। आप संभा जी को मार डाल सकते हैं, शायद अजीत सिंह, दुर्गादास और छत्रसाल बुन्देला को मार डालें, लेकिन भारत के करोड़ों नर-नारियों

को तो नहीं मार डाल सकते हैं। मैं कहता हूँ, जहाँपनाह, अब भी सचेत हो जाइए और भारत में निरंतर होनेवाली रक्तवर्षा को रोकिये।

औरंगजेब तुम हमें उपदेश देने आये हो, दुर्गादास !

दुर्गादास उपदेश देने की क्षमता दुर्गादास में कहाँ है ? मैं तो केवल अपनी भावनाओं को व्यक्त कर सकता हूँ।

औरंगजेब हमारे सामने किसी ने हमारे विचारों के विरुद्ध बात करने का साहस नहीं किया।

दुर्गादास यही तो सबसे बड़ा दुर्भाग्य है जहाँपनाह, आपका ? मैं तो कहूँगा जो लोग आपके मित्र बनकर आपकी चाटुकारिता करते रहे हैं वे ही आपके सबसे बड़े शत्रु रहे हैं। मैं कितना चाहता रहा कि औरंगजेब रूपी अद्भुत व्यक्ति से एक बार खुलकर बात करूँ, लेकिन मेरे धड़ पर केवल एक सिर था, उनकी मारवाड़ को आवश्यकता थी, इसलिए आज तक आपसे बात नहीं कर पाया।

औरंगजेब और आज······

दुर्गादास और आज जब आपने बुला ही भेजा तो मन का धुआँ निकाल ही बैठा। इसमें आपका असम्मान हुआ हो तो दुर्गादास को दंड दीजिए। अब बूढ़ा हो गया हूँ। अधिक जी न सकूँगा ! अब अजीत सिंह जी भी जवान हो गये हैं। मारवाड़ को उसका धनी मिल गया है। अब दुर्गादास शान्तिपूर्वक मर सकता है।

औरंगजेब लेकिन, दुर्गादास हमने तुमको मार डालने के लिए नहीं बुलाया।

ईश्वरदास लेकिन अभी कुछ देर पहले, आलीजाह जो धमकी दे रहे थे ?

औरंगजेब — औरंगजेब के हृदय में बचपन जाग उठा था। हमारा दुर्गादास से लड़ाई का भी नाता है और मखोल करने का भी। दुर्गादास, हमने जसवंतसिंह जी को भी माफ करके मनसब दिया था। हम तुमको भी माफ कर सकते हैं।

दुर्गादास — किन्तु, जहाँपनाह, दुर्गादास की आत्मा ने उसे अपराधी नहीं माना है।

औरंगजेब — अच्छी बात है दुर्गादास, तुम जीते हम हारे, लेकिन हम पूछते हैं कि औरंगजेब के बढ़ते हुए मित्रता के हाथ को तुम स्वीकार करोगे या नहीं ?

दुर्गादास — मैं तो औरंगजेब का मित्र ही रहा हूँ। मेरा जो संघर्ष रहा है वह जहाँपनाह की पथ-भ्रष्टता से रहा है।

औरंगजेब — कोई और समय होता तो हम तुम्हारी धृष्टता का दड देते, लेकिन अब बूढ़े हो गए हैं और सच्चे दिल से युद्धों से विरक्त हो चुके हैं, इसलिए शान्ति चाहते हैं ताकि जीवन के शेष समय में साम्राज्य में सुव्यवस्था स्थापित कर सकें।

दुर्गादास — भगवान् आपको लम्बी आयु दें।

औरंगजेब — लेकिन खेद की बात यह है कि संसार में कोई व्यक्ति अमर होकर नहीं आया। हमें जाना ही पड़ेगा। खैर, यह तो खुदा की मर्जी पर है। हमने तो आपको एक विशेष कार्य से बुलाया था।

दुर्गादास — वह तो मैं जानता हूँ। तभी तो इतना निर्भय होकर मैं आपसे बोलता रहा। जानता था कि जब तक शाहजादी सफीयतुन्निसा और शाहजादा बुलंद अख्तर मारवाड़ में हैं, जहाँपनाह की तलवार दुर्गादास को नहीं छू सकती।

औरंगजेब — तो तुम उन्हें हमें कब वापस कर रहे हो ?

दुर्गादास — वे वहाँ बहुत मजे में हैं।

औरंगजेब — लेकिव वे जब तक वहाँ हैं हम तो निश्चित नहीं हैं।

दुर्गादास — क्यों जहाँपनाह ?

औरंगजेब — हम बूढ़े हो गए हैं, दुर्गादास ! हमारे अन्दर जो प्यार करने-वाला दिल सोया हुआ था वह जाग पड़ा है। वे हमारे बेटे के बच्चे हैं। उन्हें भी प्यार करना चाहिए, उनका पिता ईरान में है। माँ इस संसार में ही नहीं है। माँ-बाप के प्यार के बिना वे अपने आपको अनाथ अनुभव करते होंगे। हमारा भी हृदय उनके लिए व्याकुल है दुर्गादास !

दुर्गादास — किन्तु सारा मारवाड़ उन्हें प्यार करता है। जब तक मारवाड़ में रहने वाला एक भी व्यक्ति जीवित है उन्हें कष्ट नहीं हो सकता।

औरंगजेब — तुम बदला लेना चाहते हो हमसे ? सुनो दुर्गादास, हमें इंसान बनने का अवसर दो। हम प्यार करना चाहते हैं लेकिन किससे करें। हमारी सूरत में ऐसी क्या भयानकता है जो हमारे बच्चे भी हमसे दूर भागते हैं। माना कि आकांक्षाओं के अन्धेपन में हम अपनी मर्यादाएँ भूल बैठे। हमने किसी भी पवित्र नाते का सम्मान नहीं रखा। हमारे हाथ रँगे हुए हैं स्वजनों के ही खून से, लेकिन क्या हमें प्रायश्चित करने का अवसर भी संसार नहीं देना चाहता।

दुर्गादास — जहाँपनाह, फिर नाटक करने लगे।

औरंगजेब — नहीं दुर्गादास, इस समय मैं नाटक नहीं कर रहा, तुम ही

नाटक कर रहे हो। मैं नहीं मान सकता कि तुम इतने निष्ठुर हो कि तुम हमसे हमारे बच्चे छीन लोगे।

दुर्गादास — आपके हाथ मारवाड़ का धनी शिशु अजीत सिंह पड़ जाता, तो सुना है, आप उसे मुसलमान बनाकर मारवाड़ की गद्दी पर बैठाते।

औरंगजेब — तो क्या तुम बुलंद अख्तर को हिन्दू बनाकर दिल्ली के तख्त पर बैठाना चाहते हो। लेकिन हिन्दुओं में इतनी शक्ति कहाँ है जो विधर्मी को हिन्दू बना सकें।

दुर्गादास — लेकिन हिन्दुओं में इतनी शक्ति है कि विधर्मी को भी अपना भाई मान सकें।

औरंगजेब — देखो दुर्गादास, अगर तुमने भी हमारा मार्ग अपनाया तो तुममें और हममें अन्तर ही क्या रहा ? फिर किसलिए तुम अभी मनुष्यता का पाठ हमें पढ़ा रहे थे ! क्या तुम नहीं जानते कि शाहजादी सफीयतुन्निसा का मारवाड़ में रहना खतरे से खाली नहीं है। अब तो अजीतसिंह जवान हो चुके हैं और सफीयत भी बच्ची नहीं रही। दोनों के पास-पास रहने के परिणाम को सोच सकते हो, दुर्गादास ! इस परिणाम के लिए न तुम तैयार हो न मैं।

दुर्गादास — अगर शाहजादी सफीयतुन्निसा मेरे एक मित्र की पवित्र धरोहर न होती, और वह मारवाड़ में न होकर आपके हरम में होती तो सम्भवत: मैं इस स्वाभाविक परिणाम का स्वागत करता, किन्तु वर्तमान स्थिति में नहीं। फिर भी एक झिझक मेरे मन में है। आप वास्तव में प्यार के भूखे हैं और केवल प्रेम-वश

शाहजादी और शाहजादे को प्राप्त करने के लिए व्याकुल हैं इसपर सहसा विश्वास नहीं होता ।

औरंगजेब — दुर्गादास, तुम कह रहे थे हिन्दुस्तान में जल रही युद्ध की भयानक ज्वाला बुझनी चाहिए । हम तुम्हारा कहना मान कर मारवाड़ में सदा के लिए युद्ध बन्द करा देंगे लेकिन तुम्हें हमारी बात माननी पड़ेगी ।

दुर्गादास — तो आप जोधपुर की गद्दीपर महाराजा अजीतसिंह का अधिकार स्थापित करेंगे ।

औरंगजेब — समय पाकर संभवतः यह भी हो जायेगा दुर्गादास ! अभी तो हम तुमको एक लाख रुपया नकद, मेड़ता और जैतारण के परगनों की जागीर, तीनहजारी जात व दो हजार सवारों का मनसब देंगे और साथ ही पाटन की फौजदारी सौंपने को तैयार हैं ।

दुर्गादास — जहाँपनाह, दुर्गादास को अपने लिए दौलत, जागीर और हुकूमत की चाह नहीं है । आत्मसन्तोष ही उसके लिए सबसे बड़ी जागीर है । वह तो यह जानना चाहता है कि मारवाड़ के धनी महाराज अजीत सिंह जी के लिए आप क्या करना चाहते हैं ?

औरंगजेब — उनके लिए जालोर की जागीर, डेढ़ हजार जात और पाँच सौ सवारों का मनसब प्रदान करेंगे ।

दुर्गादास — महाराज अजीत सिंह जी बिना अपनी सम्पूर्ण बपौती प्राप्त किये आपसे सन्धि नहीं करेंगे, राठौरों की हठ को विधाता भी दूर नहीं कर सकते ।

औरंगजेब — हठ पर अड़े रहने से उन्हें क्या प्राप्त होगा ?

दुर्गादास — सिंह घास नहीं खाया करते, चाहें भूख से प्राण दे दें ?

औरंगजेब — हमें भी तो देखना है कि महाराजा-मुगल साम्राज्य के वफादार बनकर रहते हैं या नहीं। इतने वर्षों में जिस राज्य को राठौरों की तलवारें नहीं पा सकीं उसे वे कुछ वर्षों मुगल-साम्राज्य के प्रति विश्वास रखकर सरलता से पा सकेंगे। हम जानते हैं, युद्ध की विभीषिका से सम्पूर्ण मारवाड़ त्रस्त है। उसे क्यों अधिक बर्बादी की ज्वाला में झोंकना चाहते हो दुर्गादास ?

दुर्गादास — आप धमकी देते हैं, जहाँपनाह !

औरंगजेब — नहीं, धमकी नहीं दे रहे, केवल सहानुभूति के कारण इस अशुभ आशंका को हम प्रकट कर रहे हैं। हम मित्रता का हाथ बढ़ाना चाहते हैं लेकिन प्रतिरोध की भावना को नंगा नाच करने का अवसर नहीं देना चाहते। तुम हमारे स्थान पर होते तो क्या करते ?

दुर्गादास — दुर्गादास कल्पनाओं पर नहीं सत्य पर विश्वास करता है। मुझे खेद है कि इन शर्तों पर सम्भवतः महाराजा अजीत सिंह जहाँपनाह से सन्धि नहीं करेंगे।

औरंगजेब — हम अजीत सिंह से सन्धि नहीं कर रहे, हम तो दुर्गादास की मानवता से निवेदन कर रहे हैं।

दुर्गादास — दुर्गादास मारवाड़ नहीं है।

औरंगजेब — दुर्गादास की इच्छा के विरुद्ध मारवाड़ में पत्ता भी नहीं हिल सकता।

दुर्गादास — किन्तु महाराज अजीत सिंह पत्ता नहीं हैं। वे पूर्ण सत्ताप्राप्त महाराज हैं। दुर्गादास तो उनका अनुशासक-बद्ध सैनिक है।

औरंगजेब — कुछ भी हो, हमने मित्रता का हाथ तुम्हारी तरफ बढ़ाया है इसे स्वीकार करना न करना तुम्हारे हाथ में है हमारी नेक-नीयती के प्रमाण में हम अपनी तलवार तुम्हें प्रदान करते हैं।

[औरंगजेब खूँटी से उतार कर एक तलवार दुर्गादास की तरफ बढ़ाता है।]

दुर्गादास — क्षमा कीजिए जहाँपनाह; दुर्गादास आपकी तलवार को स्वीकार करके अपने आपको बाँधने की स्थिति में इस समय नहीं है।

औरंगजेब — (क्रोध पूर्वक) दुर्गादास ! तुम हमारा अपमान कर रहे हो।

दुर्गादास — जहाँपनाह ! दुर्गादास का सिर आपके आगे झुका हुआ है। आज अपने हाथ में आपसे तलवार लेकर कल आपके विरुद्ध उसे उठायें ; ऐसी स्थिति वह न आने देगा। आप उसका मस्तक काट डालिए।

[दुर्गादास अपना सिर औरंगजेब के आगे झुकाते हैं।]

[यवनिका-पतन]

तीसरा अंक

[समय—रात्रि का प्रथम प्रहर। स्थान—वही प्रथम अंक का। जिस समय परदा उठता है। शाहजादी सफीयतुन्निसा एक शिला पर बैठी हुई गीत गा रही है। आज वह काले रंग की नहीं बल्कि लाल रंग की ओढ़नी ओढ़े हुए है, इसी से जान पड़ता है कि उसके अन्तः की उदासी किसी सीमा में दूर हुई है। उसके वस्त्राभूषण भी प्रथम अंक में जैसे थे उनकी अपेक्षा भव्यतर हैं। फिर भी ऐसा नहीं जान पड़ता कि उसके जीवन में स्वाभाविक उल्लास का आगमन हुआ है। अब भी उसकी आँखों में उदासी की झलक दिखायी देती है जो गीत में स्पष्ट होती है।]

सफीयतुन्निसा (गीत)

अगर पंख मैं भी पा जाती,
नभ के पार त्वरित उड़ जाती।

भूमि बनी है नरक भयानक,
बना समीरण भी संहारक;
यहाँ साँस लेना भी पातक,
घुट-घुट कर मैं जियूँ कहाँ तक?

जीना मुश्किल, मौत न आती।
अगर पंख मैं भी पा जाती,
नभ के पार त्वरित उड़ जाती।

यहाँ फूल भी शूल बने हैं,
अपने भी प्रतिकूल बने हैं,
दिल के सपने धूल बने हैं
केवल दुख अनुकूल बने हैं।

किसको जीवन-मीत बनाती।
अगर पंख मैं भी पा जाती,
नभ के पार त्वरित उड़ जाती।

हार गले का साँप बना है,
प्यार यहाँ अभिशाप बना है,
मधुमय गीत प्रलाप बना है,
जीवन ही संताप बना है।

खुद अपने स्वर से घबराती।
अगर पंख मैं भी पा जाती,
नभ के पार त्वरित उड़ जाती।

[अजीत सिंह का प्रवेश। उसे देख कर सफीयतुन्निसा उठकर खड़ी हो जाती है। जाने का उपक्रम करती है, किन्तु अजीत सिंह मार्ग रोकता है।]

अजीतसिंह — इतनी घृणा करती हो मुझसे कि मुझे देखते ही यहाँ से जाने लगी हो।

सफीयतुन्निसा — घृणा ही कर पाती तो दूर जाने की आवश्यकता न रहती।

अजीत सिंह — इसका अर्थ हुआ कि प्यार करने वाले ही दूर भागते हैं।

सफीयतुन्निसा — जब हृदय प्यार करने के लिए स्वतंत्र नहीं होता हो वह जिससे प्यार करता है उससे दूर भागता है।

अजीत सिंह — प्यार करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्र है।

सफीयतुन्निसा — यदि वह अपने कर्त्तव्यों की तरफ से आँख मूँद ले।

अजीत सिंह — प्रेम और कर्त्तव्य प्रतिद्वन्द्वी नहीं हैं।

सफीयतुन्निसा — कभी-कभी उनका परस्पर झगड़ा हो जाता है महाराज !

अजीत सिंह — यह तुम्हारा भ्रम है शाहजादी !

सफीयतुन्निसा — नहीं, मनुष्य जीवन में हर पद-पद पर प्रेम और कर्त्तव्य का संघर्ष देखते हैं। आप तो राजपूत हैं, जानते हैं कि माता अपने पुत्र के मस्तक पर टीका करके, पत्नी पति के हाथ में तलवार देकर और बहन भाई के हाथ में राखी बाँधकर, उन्हें रणभूमि में प्राणोत्सर्ग करने भेज देती हैं। क्या इसका यह अर्थ है कि माँ अपने बेटे को प्यार नहीं करती, पत्नी पति की मृत्यु से सुख पायेगी या बहन भाई की मौत चाहती है ? प्रेम तो यही चाहेगा कि अपने प्रियजन को मृत्यु के मुँह में जाने से रोके किन्तु कर्त्तव्य की पुकार को सुनने वाले प्रेम की आवाज को नहीं सुनते।

अजीत सिंह — किन्तु वीरता केवल राजपूतों में ही सीमित नहीं है शाहजादी ! मुझे विश्वास है कि यदि तुम मेरे सूने जीवन की सहचरी बनो तो सदा ही मुझे उत्साह और प्रेरणा देती रहोगी। तुम्हारा प्रेम कभी मेरे कर्त्तव्य के पथ में पहाड़ बनकर खड़ा नहीं होगा।

सफीयतुन्निसा — किन्तु मुझे जीवन-संगिनी बनाने की आपकी इच्छा ही अपने कर्त्तव्य को भूल जाना है।

अजीत सिंह — ऐसा तुम क्यों समझती हो शाहजादी ?

सफीयतुन्निसा इसलिए कि मैंने हिन्दुस्तान का इतिहास पढ़ा है। इतिहास पढ़ने के अतिरिक्त मैं आप लोगों के बीच रह रही हूँ। आयु के हिसाब से संसार भले ही मुझे अबोध बच्ची कह ले, लेकिन अनुभवों ने मुझे बहुत-कुछ सोचने-विचारने के लिए वाध्य किया है। मैं भलीभाँति जानती हूँ कि मारवाड़ के महारानी के रूप में मुझे आपका सामंतदल कभी स्वीकार नहीं करेगा!

अजीत सिंह मैं मारवाड़ का महाराजा हूँ। मेरी आज्ञा सामंतों को माननी होगी।

सफीयतुन्निसा भोले हैं आप महाराजा! अपने हाथ से अपना मस्तक काट कर अपने राजा के सम्मुख उपस्थित कर देने वाले राजभक्त सामंत भी राजा को परम्परागत लीक को तोड़ते देखेंगे तो उसका मस्तक काटने के लिए प्रस्तुत हो जायेंगे। प्रेम बड़ा विश्वासी होता है, इसलिए आप विश्वास करते हैं, अपने सामंतों की अपने प्रति अटूट श्रद्धा पर, किन्तु नहीं जानते कि यह श्रद्धा भीतर से खोखली है, बालू की भीत है। मारवाड़ में जिस प्रकार बालू के बड़े-बड़े टीले बन जाते हैं जो देखने में पहाड़ियों से नजर आते हैं किन्तु वायु का प्रचंड वेग उन्हें उड़ा कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थापित कर देता है उसी प्रकार की है यह श्रद्धा महाराज!

अजीत सिंह किन्तु मैं कोई अपराध तो नहीं कर रहा शाहजादी! हमारा इतिहास कहता है कि सम्राट् चंद्रगुप्त मौर्य ने क्षत्रिय होते हुए भी यूनानी सम्राट् सेल्यूकस की पुत्री से विवाह किया था। और चाणक्य के ब्राह्मणत्व ने इस विवाह को आशीर्वाद दिया था।

सफीयतुन्निसा — वह भारत का स्वर्णयुग था महाराज ! उतनी उदारता और उतनी शक्ति अब कहाँ है आपके देश में, आपके समाज में। प्रेम कोई बन्धन नहीं मानता इसीलिये एक बार सम्राट् अलाउद्दीन खिलजी की एक पुत्री जालौर के राजा कनेरदेव के पुत्र विक्रम को अपना हृदय दे बैठी थी। अलाउद्दीन खिलजी हिन्दू रानियों और राजकुमारियों को अपने हरम में लाने में आनंद पा सकता था किन्तु उसकी पुत्री एक राजपूत राजकुमार के रंग महल में जाये इससे बड़ा अपमान उसका और क्या हो सकता था ? प्रेम तो अन्धा होता है, उसकी पुत्री ने अपने पिता की भावनाओं की चिन्ता नहीं की। वह अपने हठ पर दृढ़ रही। अन्त में सम्राट् ने इस विवाह की स्वीकृति दे दी।

अजीत सिंह — यही उचित था। इस उदाहरण से सिद्ध होता है कि अलाउद्दीन खिलजी समाट् औरंगजेब की अपेक्षा उदार था।

सफीयतुन्निसा — सम्भवतः यह उसकी प्रथम उदारता थी। यदि इस उदारता का उपयोग राजपूत करने का साहस करते तो कदाचित् अलाउद्दीन की कटुता हिंसक प्रवृत्ति और संकीर्णता में कमी आ जाती, लेकिन ऐसा नहीं हो सका। जालौर का राजकुमार बारात लेकर विवाह करने आने के लिये जो दिल्ली से गया तो वहीं का होकर रह गया। राजपूत राजकुमार यवन-कन्या को जीवन सहचरी बनाता, तो आकाश धरती पर नहीं टूट पड़ता ? सम्पूर्ण राजपूत जाति को नरक में नहीं जाना पड़ता ? इस बात ने अलाउद्दीन के जले हुए हृदय में नमक छिड़क दिया। वह बदला लेने के लिए पागल हो उठा। उसने जालौर पर आक्रमण किया। राजा कनेरदेव, राजकुमार विक्रम और सहस्त्रों राजपूतों को मौत के घाट उतार दिया। क्या आप इसी इतिहास की पुनरावृत्ति चाहते हैं ?

अजीत सिंह — अजीत सिंह जालौर के राजकुमार की भाँति कायर नहीं है। वह मारवाड़ की राजगद्दी छोड़ देगा लेकिन अपने प्रेम का अपमान नहीं होने देगा।

सफीयतुन्निसा — और इस प्रकार अपने धनी के लिए, राठौरों की आन का मान रखने के लिये, प्राण देने वाली सहस्रों दिवंगत आत्माओं का अपमान करोगे। नहीं महाराज, मैं आपको पतन के इस गर्त में नहीं गिरने दूँगी।

अजीत सिंह — असल बात यह है शाहजादी, कि तुम्हारा अभिमान और तुम्हारे संस्कार ही तुमसे मेरा अपमान करा रहे हैं।

सफीयतुन्निसा — कैसा अभिमान और कैसे संस्कार? अपने हृदय में मैंने कभी नहीं सोचा कि मैं मुगल शाहजादी हूँ। मैंने राजस्थान में जन्म लिया है, यहीं अपने जीवन के सोलह बसन्त पूर्ण किए हैं; खुदा से चाहती हूँ, यहीं की मिट्टी में चिर निद्रा में सो जाऊँ। यद्यपि दुर्गादास जी ने मुझे मुस्लिम धर्म और संस्कृति से पूर्णतः परिचित कराया है लेकिन वह परिचय पुस्तकों द्वारा हुआ है। मुसलमानों में मैं केवल काका कासिम खाँ को जानती हूँ या अपनी उस्तानी जिन्हें दुर्गादास जी ने अजमेर से बुलाकर मेरी शिक्षा के लिए रखा है किन्तु हिन्दुओं को तो मेरी आँखों ने देखा है। उनका निश्छल प्यार पाया है। स्वप्न में भी मैं किसी हिन्दू का अपमान नहीं कर सकती।

अजीत सिंह — लेकिन तुम्हारी नसों में मुगल-राजवंश का रक्त है इसे तुम कैसे भूल सकती हो?

सफीयतुन्निसा — यह मेरा दुर्भाग्य है कि मुझे इस सत्य से अवगत कराया गया है। दुर्गादास जी की उदारता इसके लिये अपराधिनी है। किन्तु

इस बात को भी नहीं भूलिए महाराज, कि मेरी माँ साधु-हृदय दाराशिकोह की पुत्री थीं। उस महापुरुष ने धर्म के नाम पर मनुष्य और मनुष्य में कभी भेद नहीं किया। उनका प्यार बिना भेद-भाव के, सूर्य के प्रकाश की भाँति, सब को समान रूप से प्राप्त हुआ है। आज दिल्ली के राजसिंहासन पर वह होते तो हिन्दुस्तान का रूप ही दूसरा होता।

अजीत सिंह किन्तु आज तो आप औरंगजेब के पुत्र की पुत्री हैं।

सफीयतुन्निसा हाँ, उस पुत्र की जिसने पुण्यात्मा दाराशिकोह के स्वप्न को पूर्ण करने के लिए अपने पिता से भी विद्रोह किया। मैं तो समझी हूँ उन्हें इस प्रकार की प्रेरणा देने वाली मेरी माँ—'दाराशिकोह की पुत्री ही थीं ?

अजीत सिंह तो तुम मेरे जीवन की प्रेरणा बनने से क्यों इनकार करती हो ?

सफीयतुन्निसा इसलिए कि आप अभिशाप को वरदान समझने की भूल कर रहे हैं। और प्रश्न केवल महाराजा अजीत सिंह का नहीं है, प्रश्न है सम्पूर्ण मारवाड़ का, सम्पूर्ण राजस्थान का और सारे हिन्दुस्तान का। बीस वर्षों से मारवाड़ जो युद्ध कर रहा है, दुर्गादास जी और मेरे अब्बा ने जिस उद्देश्य के लिए अपने सारे सुख-वैभव को तिलांजलि देकर अभावों और कष्टों को गले लगाया है—प्रश्न उसका है। आपको इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए मारवाड़ ने सहस्रों प्राणों की बलि देकर जीवित रखा है। मैं किस अधिकार से आपको मारवाड़ से छीन सकती हूँ।

अजीत सिंह तुम बहुत निष्ठुर हो।

सफीयतुन्निसा क्या आप नहीं जानते कि आपके प्रति निष्ठुर होकर मैं अपने ही प्रति निष्ठुरता कर रही हूँ ? अपने यौवन के अरुणोदय में मैंने जिस पुरुष के प्रथम दर्शन किये हैं वह आप हैं। मेरी हृदयाञ्जलि के सारे सुमन अनायास ही इन चरणों पर गिर पड़े हैं, फिर भी मैं अनुभव करती हूँ कि हमारे मिलन-मार्ग में एक महासमुद्र लहरा रहा है। हम नहीं मिल सकते, नहीं मिल सकते, नहीं मिल सकते।

अजीत सिंह किन्तु मैं इस महासमुद्र में कूद जाऊँगा, चाहे लहरें मुझे निगल जायें। तुम मेरी सम्पूर्ण आशा-अभिलाषाओं का केन्द्र हो। यदि मुझे यह ज्ञात हो जाता कि तुम वास्तव में मुझसे घृणा करती हो तो सम्भवतः अपने उन्माद पर नियन्त्रण कर लेता लेकिन जब मैंने तुम्हारी आँखों में प्रेम के अक्षर पढ़ लिये हैं तो धैर्य नहीं रख सकता। मैं तुम्हारे लिए सम्पूर्ण विश्व से संग्राम करूँगा, ईश्वर भी बीच में आयेगा तो उसका शासन नहीं मानूँगा।

सफीयतुन्निसा (भाव-विह्वल होकर) कितनी मधु-मिश्रित हैं ये आपकी बातें, किन्तु मेरा विवेक अपनी आँखें बन्द नहीं करना चाहता। यह ऐसा मधु है, मेरे राजा, जो कानों की राह हृदय में जाकर शरीर के सम्पूर्ण रक्त को विषाक्त कर देता है। शरीर के रक्त को ही नहीं यह आत्मा को भी प्रभावित करता है।

अजीत सिंह तुम मेरी हो सफीयत !

[सफीयतुन्निसा का हाथ पकड़ता है।]

सफीयतुन्निसा मेरा हाथ न भी पकड़ें तब भी आप मेरे हैं और मैं आपकी हूँ—फिर भी मैं आपको मारवाड़ का, हिन्दुस्तान का ही रहने देना चाहती हूँ।

अजीत सिंह — दो घड़ी के लिए भूल जाओ सफीयत, मारवाड़ को, हिन्दुस्तान को, मानवता को और ईश्वर को। संसार में तुम हो और मैं हूँ। आओ, आकाश के दो नक्षत्रों की भाँति, हम इस शिला पर पास बैठ जायें।

[अजीत सिंह, सफीयतुन्निसा को शिला पर बैठाना चाहता है लेकिन सफीयतुन्निसा नहीं बैठती।]

सफीयतुन्निसा — नहीं महाराजा, आपके पास बैठ पाऊं ऐसी शुभ घड़ी अभी नहीं आयी।

अजीत सिंह — तब वह घड़ी कभी आयेगी भी।

सफीयतुन्निसा — वह घड़ी तब आयेगी जब मैं दिल्ली के राजमहल में हूँगी और आप बारात लेकर आयेंगे।

अजीत सिंह — लेकिन तुम दिल्ली के राजमहल में कभी नहीं होगी।

सफीयतुन्निसा — क्यों नहीं हूँगी ?

अजीत सिंह — इसलिए कि मैं तुम्हें नहीं जाने दूँगा।

सफीयतुन्निसा — क्योंकि वहाँ पहुँचने पर मैं आपकी पहुंच के परे हो जाऊँगी, और तुम्हारा प्यार या तुम्हारी तलवार मुझे वापस लाने में असमर्थ है।

अजीत सिंह — लेकिन मैं तुम्हें पाताल में से भी खोज लाऊँगा।

सफीयतुन्निसा — पाताल में से खोज लाना सम्भव है लेकिन सम्राट् औरंगजेब के हाथों में से मुझे ले आना असम्भव है। आपके पिता श्री महाराजा जसवंत सिंह भी उनकी तलवार का लोहा मान चुके हैं।

अजीत सिंह — मैं पिताजी के माथे के इस कलंक को अपने शौर्य से धो डालूँगा।

सफीयतुन्निसा — मात्र एक लड़की को प्राप्त करने के लिए? रहने दीजिए अपना यह जोश। मैं ऐसी अनमोल निधि नहीं हूँ। यह धरती कंगाल नहीं है। इसी राजस्थान में पद्मिनियाँ हुई हैं, मैंने अपनी आँखों से इस राजस्थान में ऐसा सौन्दर्य देखा है जिनको देखते से आँखें चौंधिया जाती है। आप राजा हैं, आपकी आज्ञा से इन्द्रपुरी की अप्सराएँ भी धरती पर उतर आयेंगी।

अजीत सिंह — लेकिन इस धरती की अप्सरा आज मेरे साथ शिला पर नहीं बैठेगी।

सफीयतुन्निसा — यदि हम जीवन भर शिला पर ही बैठे रह सकते तो सम्भवतः मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं होती। लेकिन आपका नशा कुछ क्षणों में उतर जायगा क्योंकि राजगद्दी की पुकार सुनकर आप मुझे भूल जायेंगे।

अजीत सिंह — नहीं, मैं राजगद्दी को भूल जाऊँगा।

सफीयतुन्निसा — एक नारी के कारण राजगद्दी को भूल जाने वाला राजा नारी से सम्मान नहीं पा सकता। नारी पुरुष को वीर और पराक्रमी देखना चाहती है।

अजीत सिंह — स्वेच्छा से राजगद्दी को त्याग देना भी महान् पराक्रम है, सफीयतुन्निसा! पुरुषोत्तम राम ने अपनी इच्छा से राजगद्दी को छोड़ दिया है। मैं भी उन्हीं का वंशज हूँ।

सफीयतुन्निसा — उन्होंने तो लोकरंजन के लिए नारी को भी त्याग दिया था। मारवाड़ का लोक-मानस आपसे उसी वीरता, को, उसी न्याय की अपेक्षा करता है।

अजीत सिंह — मैं तुमसे तर्क में नहीं जीत सकता लेकिन प्रेम कोई तर्क नहीं सुनता। तुम्हें मेरे साथ इस शिला पर बैठना ही होगा।

[अजीत सिंह फिर सफीतुन्निसा को अपने पास शिला पर बैठाना चाहता है, सफीयतुन्निसा बैठ भी जाती है लेकिन जैसे ही वह उसका हाथ छोड़ता है वह उठकर भागती है। अजीत सिंह पीछा करता है, इतने में ही बुलंद अख्तर प्रवेश करता है। उसे देखते ही अजीत सिंह और सफीयतुन्निसा अपने-अपने स्थान पर रुक जाते हैं।]

बुलंद अख्तर — (सफीयतुन्निसा से) मैं तुम्हें हवेली में खोज रहा था और तुम यहाँ महाराजा के साथ छियापाती खेल रही हो।

अजीत सिंह — यह मुझसे बहुत लम्बी छियापाती खेलना चाहती हैं और ऐसी जगह छिप जाना चाहती है, जहाँ से मैं इन्हें पा न सकूँ।

सफीयतुन्निसा — और ये मुझे बन्दी बना लेना चाहते हैं।

बुलंद अख्तर — बन्दी तो हम हैं ही आपके ?

अजीत सिंह — आप आतिथ्य को बंधन समझते हैं शाहजादा हुजूर ?

बुलंद अख्तर — मुझे शाहजादा हुजूर न कहिए, महाराज !

अजीत सिंह — तो क्या कहूँ ?

बुलंद अख्तर — बुलंद अख्तर कहिए, भाई कहिए।

अजीत सिंह — तो आप भी भविष्य में मुझे महाराजा नहीं कहिए।

बुलंद अख्तर — आप तो है हीं महाराजा ! मारवाड़ की सारी प्रजा आपको महाराजा मानती है। और आपकी प्रजा के रूप में मैं भी आपको महाराजा मानता हूँ।

अजीत सिंह आप और मेरी प्रजा ! क्यों लज्जित करते हैं आप मुझे !

बुलंद अख्तर बीस वर्ष से आपका अन्न खा रहा हूँ।

अजीत सिंह हमारी कई पीढ़ियों ने आपके पूर्वजों का अन्न खाया है।

बुलंद अख्तर अपने पूर्वजों से बुलंद अख्तर का कोई सम्बन्ध है, इसे वह भूल जाना चाहता है।

अजीत सिंह लेकिन क्यों ?

बुलंद अख्तर याद रखने में बहुत झंझटें हैं।

अजीत सिंह क्यों ?

बुलंद अख्तर यह याद आने पर कि मैं बादशाह के वंश में जन्मा हूँ, बादशाह बनने की आकांक्षा होती है।

अजीत सिंह तो क्या यह बुरी बात है ?

बुलंद अख्तर तोबाह ! खुदा और सब कुछ प्रदान करे, बादशाहत न बख्शे !

सफीयतुन्निसा भाईजान, इतनी घृणा है तुम्हें बादशाहत से ?

बुलंद अख्तर तुम्हीं ने तो एक दिन कहा था जब तक संसार में राजा, महाराजा और सम्राट् हैं, संसार में खेली जाने वाली खून की होली बन्द नहीं होगी।

अजीत सिंह राजा, महाराज और सम्राट् नहीं होंगे तो लुटेरों से प्रजा की रक्षा कौन करेगा ?

सफीयतुन्निसा प्रजा स्वयं अपनी रक्षा करेगी और सच बात तो यह है कि राजा, महाराजा और सम्राट् ही तो सबसे बड़े लुटेरे हैं। प्रजा

की गाढ़ी कमाई का धन लूट-लूटकर अपने कोष भरना और उससे अपने विलास के साधन जुटाना ही तो इनका काम है।

अजीत सिंह — तब तो तुम्हें मुझसे छियापाती नहीं खेलनी चाहिए।

बुलंद अख्तर — छियापाती से बादशाहत का क्या सम्बन्ध महाराज !

अजीत सिंह — मैं इन्हें पकड़ लेना चाहता हूँ।

बुलंद अख्तर — सो तो आपने पकड़ ही रखा है हमें।

अजीत सिंह — लेकिन यह कहती है—'मैं भागकर सम्राट औरंगजेब के पास छिप जाऊँगी।'

बुलंद अख्तर — इससे तो अच्छा है कि समुद्र के किनारे जाकर उसमें छलांग मार दो या इतनी दूर न जाते बने तो किसी भूखे सिंह के जबड़े में अपनी खोपड़ी दे दो।

अजीत सिंह — तो आप और मैं इस बात में सहमत हैं कि इन्हें औरंगजेब के पास नहीं जाना चाहिए।

बुलंद अख्तर — सौ टका।

सफीयतुन्निसा — लेकिन एक बात में तो आप इनसे सहमत नहीं हो सकते।

बुलंद अख्तर — किस बात में ?

सफीयतुन्निसा — कि यह मुझे पकड़ लें।

बुलंद अख्तर — मैं जरा मूर्ख आदमी हूँ, मुझसे साफ बात करो।

सफीयतुन्निसा — यह मुझसे विवाह करना चाहते हैं।

बुलंद अख्तर — यह तो बहुत बुरी बात है।

अजीत सिंह — इसमें बुरा या अस्वाभाविक क्या है ? हमारे पूर्वजों ने अपनी राजकुमारियाँ मुगल-सम्राटों या शाहजादों को दी थीं, आज मैं उनसे लेना चाहता हूँ।

बुलंद अख्तर — इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं। मैं तो खुदा से मनाता हूँ कि आप लोगों में इतनी शक्ति आये, लेकिन मेरी आपत्ति दूसरी ही है।

अजीत सिंह — क्या ?

बुलंद अख्तर — यही कि लड़कियों को राजाओं या सम्राटों से विवाह नहीं करना चाहिए।

अजीत सिंह — क्यों ?

बुलंद अख्तर — इसलिए कि विवाह करने से बच्चे पैदा होते हैं।

अजीत सिंह — तो इसमें अनर्थ की क्या बात है ?

बुलंद अख्तर — फिर वह जवान होते हैं।

अजीत सिंह — यह तो स्वाभाविक बात है।

बुलंद अख्तर — और जवान होते ही वे चाहते हैं बाप मर जाये और हम गद्दी पर बैठ जायें। बाप मरने में देर करता है तो वे उसे मार डालने का यत्न करते हैं। उनके और भी भाई हुए तो वे एक-दूसरे को मारने पर उतारू रहते हैं। जिन्हें मरना होता है, वे मरते हैं लेकिन उनके कारण और भी हजारों व्यक्ति मरते हैं। भला उनको गद्दी से क्या लेना-देना होता है। अच्छा हुआ कि अब्बाजान बादशाह न बन सके। आपके दुर्गादास जी ने तो मार-मार कर उन्हें सम्राट् बना ही छोड़ा था। कहीं वह सचमुच सम्राट् बन जाते तो मुझे......अब क्या वह बात मुँह से निकालूं।

अजीत सिंह — तो आप विवाह नहीं करेंगे ?

बुलंद अख्तर — मुझे विवाह करने में क्या खतरा है ? मैं कहाँ का सम्राट् हूँ ?

अजीत सिह — हम लोग आपको सम्राट् बनाना चाहें तो ?

बुलंद अख्तर — यह तो भयानक बात है। इस खतरे की तरफ तो मेरा ध्यान ही नहीं गया था। सफीयतुन्निसा ने अवश्य एक दिन मखौल में पूछा था—'तुम सम्राट् बनोगे तो क्या नाम रखोगे।' उस दिन तो मैंने इसकी बात को हवा में उड़ा दिया। आज कुछ समझ में आ रहा है कि इस बलिदान के बकरे को दुर्गादास जी क्यों चरा-चक्कर मोटा कर रहे हैं। अब तो मुझे भी भागने का मार्ग खोजना पड़ेगा।

सफीयतुन्निसा — कहाँ भागोगे ?

बुलंद अख्तर — भागने की एक ही जगह है—'जिंदापीर आलमगीर बादशाह औरंगजेब के पास।

अजीत सिंह — संसार से ऊब गए हो। औरंगजेब के पास जाने का अर्थ निश्चित मौत है।

बुलंद अख्तर — तभी तो उनके पास जाना चाहता हूँ। अपने लिए आप लोगों की गर्दनें कटवाऊँ इससे तो अच्छा है जाकर मैं अपनी ही गर्दन कटवा लूँ।

सफीयतुन्निसा — कोई ऐसा मार्ग नहीं है भाईजान, कि आपकी गर्दन भी बच जाये और इन लोगों की भी ?

अजीत सिंह — हम लोगों की गर्दन पर तो आज भी औरंगजेब की तलवार टँगी हुई है और जब तक वह जीवित है टँगी ही रहेगी।

बलंद अख्तर — उनकी तलवार तो मेरी गर्दन पर भी टँगी हुई है लेकिन उसे रोक रखा है दुर्गादास जी की तलवार ने।

अजीत सिह — केवल दुर्गादास जी की तलवार ने ? मारवाड़ की तलवार ने नहीं ?

बुलंद अख्तर — ओह हो ! दुर्गादास ही तो मारवाड़ हैं।

अजीत सिह — और अजीत सिह कुछ नहीं है ?

बुलंद अख्तर — बहुत भयानक बात कह डाली आपने ?

सफीयतुन्निसा — क्यों, भाईजान ?

बुलंद अख्तर — सुना है, आजकल सम्राट् औरंगजेब के सारे पुत्र कुढ़कर मन ही मन कहते रहते हैं कि औरंगजेब ही सब कुछ है हम कुछ नहीं ? मनुष्य नाम चाहता है, प्रभुता चाहता है, स्वतंत्रता चाहता है, अपना ही गला काट लेने की स्वतंत्रता चाहता है।

अजीत सिंह — आप कभी-कभी विचित्र बातें करते हैं।

बुलंद अख्तर — हाँ विचित्र बातें तो कहता ही हूँ, क्यों कि रात-दिन लोगों की विचित्रता देखता हूँ। आप लोग रहते हैं महलों में, कभी-कभी जंगलों, पहाड़ों और रेगिस्तानों में भी भटकते हैं, क्यों कि युद्ध के दिन हैं। लेकिन रहते हैं झोपड़ियों में बसनेवाले संसार से दूर, और मैं कभी-कभी गरीबों की झोपड़ियों में भी घूम आता हूँ। उनके यहाँ सोगरा* और राब भी खा आता हूँ, इसलिए मेरी बुद्धि भी देहातियों जैसी हो गयी है। कभी-कभी विचित्र बातें कह बैठता हूँ।

अजीत सिंह — लेकिन आपने यह तो बताया ही नहीं कि मेरी बात में भयानकता क्या है ?

---

*बाजरे की रोटी

बुलंद अख्तर — बुद्धिमान के लिए इशारा ही पर्याप्त होता है। दुर्गादास जी ने आपको अभी तक अपने पंखों के नीचे अंडे की तरह सेया है। संसार की हिंसक आँखों से बचाकरपाला है। आज आपके पंख निकल आये हैं तो आप पूछते हैं क्या दुर्गादास ही सब कुछ हैं ?

सफ़ीयतुन्निसा — पख निकल आने पर प्रत्येक पंछी उड़ना चाहता है।

बुलंद अख्तर — तो उड़ें महाराजा भी, कौन रोकता है ? लेकिन बूढ़े पंछी का अपमान तो न करें। आज भी उसके डैनों में बहुत बल है। उसने अपनी अथक उड़ानों से आकाश का कोना-कोना छान मारा है, प्रत्येक जंगल, नदी, घाटी, पहाड़ों से वह परिचित है। आज भी नये पंछी को उसकी आवश्कयता है। और मान लो आवश्यकता न भी रहे तब भी कृतज्ञता नाम की कोई वस्तु है। बूढ़े पंछी के पंख थक जायें तो जवान पंछी का कर्त्तव्य है कि उसे दाने ला-ला कर घोंसले में ही उपलब्ध कर दे।

अजीत सिंह — तो मैं उनपर कौन सा अत्याचार करना चाहता हूँ, भाई ?

बुलंद अख़्तर — खुदा न करें कभी आपके मस्तिष्क में उनपर अत्याचार करने की दुर्बुद्धि उत्पन्न हो किन्तु मैं आपकी बात सुनकर डर गया था। किसे पता था एक दिन सलीम सम्राट् के विरुद्ध, शाहजहाँ जहाँगीर के विरुद्ध, और औरंगजेब शाहजहाँ के विरुद्ध तलवार लेकर खड़े होंगे। प्रभुता की भूख, सत्ता की अभिलाषा ऐसी बला है जो हमारे विवेक की बत्ती गुल करती है। भाई अजीत सिह जी, आपको बराबर का भाई समझकर ही ये बातें आप से कह रहा हूँ। आप पर बहुत उत्तरदायित्व हैं।

अजीत सिंह — आपके उपदेश के लिए धन्यवाद !

बुलंद अख्तर उपदेश देने के लिए तो मैंने कुछ नहीं कहा, मेरे भाई! दुर्गादास जी की बात जाने भी दूँ, क्योंकि उनमें बहुत कुछ सहने की शक्ति है, लेकिन कभी-कभी जरा अपने मारवाड़ को, उजड़े और श्मशान हुए मारवाड़ को उसके अन्तरंग में प्रवेश करके तो देखो! आप राजा हैं, आपको अपने राजमुकुट की रक्षा करने के लिए धन चाहिए, बीस वर्ष से यह धन प्रजा दे रही है। वह प्रजा दे रही है; युद्ध में जिसके व्यापार-धन्धे, खेती-बारी सब कुछ नष्ट हो गये हैं। आपकी एक ललकार पर हजारों तलवारें आसमान में बिजलियों की भाँति चमक उठती हैं, इन तलवारों के पकड़नेवाले इन्हीं अभाव-ग्रस्तों में से आते हैं। कमाऊ पूत रणक्षेत्र में जाकर सो जाते हैं, रह जाते हैं बूढ़े औरतें, बच्चे। कभी इनके विषय में भी सोचा है। युद्ध की विभीषिका आप लोगों को रण का शौक पूरा करने का साधन हो सकती है लेकिन इन लोगों को जो दुर्दशा होती है उसपर तो ध्यान देना चाहिये। आप लोग राजमुकुट धारण करते हैं या गँवाते हैं किन्तु इनके भाग्य में तो केवल विनाश ही लिखा रहता है।

अजीत सिंह तो क्या मारवाड़ को औरंगजेब की सर्वभक्षक भूख के उदर में चुपचाप समा जाने दिया जाये, उसका कोई विरोध नहीं किया जाये। दुर्गादास और अजीतसिंह अपनी तलवारों को म्यान में करलें ताकि झोपड़ी में बसनेवाले जीवनों की रक्षा हो सके।

बुलंद अख्तर जब मनुष्यों की बस्ती में एक दो नहीं अनगिनती नर-भक्षक हिंसक पशु घुस आये हों तो एक दुर्गादास और एक अजीत-सिंह के तलवार फेंक देने से भी क्या होगा! जिन दांतों को नर-रक्त का स्वाद पड़ गया है वे क्या शान्त होकर अपनी गुफाओं में जाकर बैठेंगे? यह भी तो एक प्रश्न है।

सफीयतुन्निसा — लेकिन भाईजान, जब व्यक्तिगत महत्वकांक्षाओं में टक्कर होती थी तो एक दो सैनिक झड़पों के बाद किसी एक को विजय और एक को पराजय मिल जाती थी और युद्ध समाप्त हो जाता था। एक शासक रहता था, दूसरा आ जाता था और सर्वसाधारण के कार्य यथाविधि चलते रहते थे किन्तु आज कहने के लिए एक राजा से दूसरा राजा लड़ता है लेकिन वास्तव में जाति, धर्म या राष्ट्र का नाम लेकर सामूहिक और व्यापक समर चेतता है। प्रत्येक नगर, प्रत्येक गाँव और प्रत्येक व्यक्ति युद्ध में किसी न किसी रूप में सम्मिलित रहता है और एक दो मुठभेड़ों में ही कोई समूह पराजय स्वीकार नहीं करता। पीढ़ियों तक ये युद्ध चलते रहते हैं। मनुष्य प्रगति के पथ पर जाने के बजाय अवनति के पथ पर जाने लगता है।

बुलंद अख्तर — किन्तु इसमें भी समूहों, वर्गों, जातियों, राष्ट्रों या धर्मों का अपराध है ऐसा मैं नहीं मानता। यह सब थोड़े से व्यक्तियों का अपराध है। वे सत्ता चाहते हैं, प्रभुता चाहते हैं, वैभव चाहते हैं, इनको पाने के लिए उन्हें शक्ति चाहिए। जन-बल सबसे बड़ी शक्ति है। आज महाराज अजीत सिंह के पास क्या है? जोधपुर के गढ़ पर मुगल-झंडा फहरा रहा है, इन्हें जंगल जंगल भटकना पड़ता है फिर भी ये शक्तिमान हैं, और विशाल मुगल-साम्राज्य की चुनौती का उत्तर देने में समर्थ हैं, क्योंकि इन्हें विश्वास है कि वंश और जाति के अभिमान से राजपूत उन्मत्त हैं। वे सदा ही उन्मत्त की सी स्थिति में रहते हैं, नशे की हालत में ही वे प्राणों पर खेल जाते हैं। सम्राट औरंगजेब को राज्य प्राप्त करने के लिए अपने पिता से और अपने भाइयों से लड़ना था। माना कि उनके पास सेना थी लेकिन वह इतनी नहीं थी कि मुगल-साम्राज्य की केन्द्रीय शक्ति को पराजित

करले, तब उनके उपजाऊ मस्तिष्क ने इस्लाम की सेना का नारा बुलन्द किया और जो मुस्लिम-सेना उसके शत्रुओं के पास थी वह भी इस्लाम के नाम पर उनके साथ हो गयी और इस तरह उनकी राजनीति ने अस्थायी सफलता प्राप्त कर ली।

अजीत सिंह — किन्तु सम्राट् शाहजहाँ और युवराज दाराशिकोह के पास भी तो हिन्दुओं का बल था।

बुलंद अख्तर — लेकिन हिन्दू किस युग में धर्म के नाम पर एक होकर रहे हैं। कब उनमें यह बात रही है कि शूद्र की पीठ पर जो प्रहार होता है उसकी पीड़ा को ब्राह्मण ने अनुभव किया हो। शूद्र और ब्राह्मणों की बात जाने दो आप राजपूत-राजपूत ही परस्पर एक दूसरे के दुख-दर्दों में कब सम्मिलित होते हैं? पृथ्वीराज चौहान पर आक्रमण होता है तो जयचन्द गहड़वाल सुख की नींद सोते हैं। हमारे समय में ही ले लीजिए, शिवाजी पर आक्रमण करने जय सिंह और जसवन्त सिंह जाते हैं। कभी-कभी आप लोगों में अस्थायी सन्धियाँ भी हो जाती हैं जैसे दुर्गादासजी के यत्न से मेवाड़ और मारवाड़ में हो गयी थी। अजीत सिंह जी मेवाड़ की राजकुमारी के पुत्र जो हैं इसलिए मेवाड़ के महाराणा इनके जीवन और स्वत्वों के लिए संघर्ष करनेवाले राठौर के साथ हो गये। किन्तु कितने दिन साथ दिया उन्होंने। जब सम्राट् औरंगजेब ने उनकी तरफ सन्धि के लिए अलग से हाथ बढ़ाया तो वे उसे ठुकराने का साहस नहीं कर सके। रह गये राठौर अकेले ही सम्राट् औरंगजेब की कोपाग्नि में जलने के लिए। इन हिन्दुओं का बल था दाराशिकोह के पास, और इसलिए उन्हें पराजित होना पड़ा।

सफ़ीयतुन्निसा — लेकिन क्या मुसलमान, मुसलमान का शत्रु कभी नहीं हुआ?

बुलंद अख्तर — हुआ क्यों नहीं ? अरे जब बाप बेटे का शत्रु हो सकता है भाई भाई का हो सकता है तो मुसलमान, मुसलमान का क्यों नहीं हो सकता। बहादुर बाबरशाह और उस समय के दिल्ली सम्राट् इब्राहीम लोदी में टक्कर क्यों हुई ? बलख और बुखारा में मुगल-सेना वहाँ के मुसलमानों से क्यों टकरायी थी ? सम्राट् औरंगजेब ने दक्षिण के मुस्लिम राज्यों का नाश क्यों किया ? सच बात यह है कि धर्म से धर्म की टक्कर कभी नहीं होती, केवल व्यक्तियों के स्वार्थ टकराते हैं। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि अपेक्षाकृत हिन्दू अधिक विश्रृंखल हैं।

अजीत सिंह — किन्तु सम्राट् अकबर से लेकर सम्राट् शाहजहाँ के काल तक प्राय: सारे हिन्दू राज्य मुगलों की शक्ति बन कर रहे। उनका पारस्परिक कलह समाप्त हो गया।

बुलंद अख्तर — हाँ, उन्हें एक सूत्र में बाँधने के लिए उनके मस्तक पर तना हुआ एक डंडा चाहिये। स्वेच्छा से एक होकर रहना उन्होंने जाना ही नहीं है। बेचारे महाराणा संग्राम सिंह ने यत्न किया था कि सारे प्रमुख हिन्दू राज्य मिलकर बाबरशाह को हिन्दुस्तान से खदेड़ कर बाहर कर दें, लेकिन उनके साथियों में से ही कुछ ऐन युद्ध के समय बाबर के प्रलोभन के शिकार हो गये और वह जीती बाजी भी हार गये। बयाना-सीकरी के युद्ध में जो चोटें उन्होंने खायी थीं उनसे तो उन्हें रक्षा मिल गयी लेकिन अपने ही सामन्तों द्वारा दिये गये जहर से वह अपने प्राणों की रक्षा नहीं कर सके।

सफीयतुन्निसा — आज तो तुम हिन्दुओं के पीछे डंडा लेकर ही पड़ गये हो। महाराजा अजीत सिंह क्या सोचते होंगे ?

बुलंद अख्तर — मुझे खेद है कि आवेश में आकर मैं ये सारी बातें कह गया।

लेकिन महाराजा अजीत सिंह जी, मैंने विद्वेषवश ये बातें नहीं कही हैं। मैं तो समझदार मुसलमानों और बलवान हिन्दुओं का एक ऐसा शक्तिशाली हिन्दुस्तान देखना चाहता हूँ जिसकी तरफ कोई भी विदेशी शक्ति लालच की दृष्टि से न देख सके।

अजीत सिंह — लेकिन हिन्दुस्तान जाग रहा है, इसका प्रमाण आपको पंजाब के सिखों, बुन्देलखंड के बुन्देलों, महाराष्ट्र के मराठों और राजस्थान के राजपूतों में नहीं मिलता क्या ?

बुलंद अख्तर — ये बिखरी हुई जागृतियाँ सम्भव है मुगल-साम्राज्य के ढाँचे को धराशायी करदें। लेकिन उससे होगा क्या ? मुगल-साम्राज्य की जो प्राचीर विदेशियों को हिन्दुस्तान से आने के लिए खड़ी है वह गिर जायेगी। वह कौनसी शक्ति होगी जो इसका स्थान लेगी। कभी सोचा है आपने इसको ? क्या आप लोग परस्पर एक होंगे। और एक हो भी गये तो मुसलमानों का क्या करेंगे ? उन्हें आप अरब, तुर्किस्तान ईरान और अफगानिस्तान तो नहीं भेज सकते, न सबको हिन्दू ही बना सकते हैं। उन्हें यहीं जीना है, यहीं मरना है।

अजीत सिंह — तब उपाय क्या है ?

बुलंद अख्तर — उपाय क्या है ? उपाय कुछ नहीं है। जबतक राजा, महाराजा और सम्राटों और इनका समर्थन करने वाले तथा कथित धर्म-गुरुओं के हाथ में हिन्दुस्तान का भाग्य है तब-तक इस सृष्टि का बनानेवाला भी इसे सर्वनाश से नहीं बचा सकता। जिनका स्वार्थ धर्म और जातियों के नामपर हिन्दुस्तान को विश्रृङ्खलित रखने में है वे इस महान् देश की भावनात्मक एकता होने ही नहीं देंगे। इस भावनात्मक एकता को लाने के लिये देश में विचारों की क्रान्ति होनी आवश्यक है। राजमुकुटो को जमीन

में गाड़ देना होगा या समुद्र में फेंक देना होगा। जनता को स्वयं अपना भाग्य विधाता बनना होगा। धर्म को राजनीति से निर्वासित करना होगा। दुर्गादास को अजीत सिंह के लिए नहीं लड़ना पड़ेगा, बल्कि जो भी संघर्ष होंगे वे जनता के अधिकारों के लिए होंगे।

सफीयतुन्निसा तो भाईजान आप हिन्दुस्तान के राजसिंहासन पर बैठने का यत्न क्यों नहीं करते।

अजीत सिंह राजपूत शक्ति आपके साथ होगी।

बुलंद अख्तर मैं राजमुकुटों के परम्परा के विरुद्ध हूँ।

सफीयतुन्निसा आप सम्राट् औरंगजेब के मस्तक से राजमुकुट को छीन कर जनता के चरणों में अर्पित कर देना।

बुलंद अख्तर किन्तु इसके लिए कितना रक्त बहाना पड़ेगा। कितनी सेना और कितना धन मुझे जरूरी होगा। तुमने ही तो एक दिन कहा था—हिंसा और असत्य से तलवार की शक्ति से संग्राम करना भूल है। तलवार से तुम बुरे को मार सकते हो, बुराई को नहीं। उसी दिन से मैं इस प्रश्न पर निरन्तर सोचता रहा हूँ। जिस पथ पर हिंसा की होड़ लगी हुई है उस पर बुलंद अख्तर नहीं जायेगा।

अजीत सिंह तो आप मैदान छोड़कर भाग जाना चाहते हैं!

बुलंद अख्तर भागना चाह कर भी मनुष्य जीवन-व्यापी संग्राम से भाग नहीं सकता। उसे युद्ध तो करते रहना पड़ता है। केवल मृत्यु ही अन्त में विश्राम देती है। अभी मैं मृत्यु की आड़ में नहीं छिपना चाहता, इस लिए कहना चाहिये मुझे संग्राम करना है। और अभी तक मैं आपसे जो बातें करता रहा हूँ वह भी तो एक संग्राम था महाराजा, अजीत सिंह जी! अब मैं जाऊँ, आप

दोनों छियापाती खेलो, मैं बिस्तर पर लेट कर अपने विचारों के साथ संग्राम करूँगा।

[बुलंद अख्तर का प्रस्थान।]

सफीयतुन्निसा अब मुझे भी जाने की अनुमति दीजिए, महाराज !

अजीत सिंह नहीं सफीयत, थोड़ी देर बैठो मेरे साथ। मैं हिंसक पशु नहीं हूँ। तुम्हारे सम्मान का पूरा ध्यान मुझे है। आज शाहजादा बुलंद अख्तर ने मेरे हृदय और मस्तिष्क में तूफान उठा दिया है। इसे शान्त कर दो तुम एक गीत गाकर।

[सफीयतुन्निसा अजीत सिंह के साथ शिला पर बैठ जाती है। अजीत सिंह उसका हाथ अपने हाथ में लेता है।]

अजीत सिंह कितनी शान्ति मिलती है, नारी का सहारा पाकर पुरुष को ?

सफीयतुन्निसा आप गीत सुनना चाहते थे न ?

अजीत सिंह (कुछ स्वप्न से जागता हुआ सा) हाँ, कहा तो मैंने यही था किन्तु जो तुम मेरे पास आ बैठी हो तो मुझे ऐसा जान पड़ता है कि प्रकृति का कण-कण गीत सुना रहा है। मेरी साँसों में भी एक मादक संगीत छिड़ा हुआ है। सफीयत, दिल्ली के मयूर सिंहासन से अधिक मूल्यवान् मुझे यह शिला जान पड़ती है। तुम्हें नहीं जान पड़ती ?

सफीयतुन्निसा मुझे यह शिला सूरज में से टूटा हुआ जलता हुआ टुकड़ा जान पड़ता है इसे चाँद का सुशीतल टुकड़ा समझ कर हम इस पर बैठ तो गये हैं लेकिन इसके ताप को सहने की ताब हममें नहीं है। अधिक देर इस पर बैठे रहेंगे तो हम दोनों का सम्पूर्ण अस्तित्व भस्म का ढेर-मात्र रह जायेगा।

अजीत सिंह — यह भी हो जाये तो अच्छा है। दो हृदय, जीवन के पार ही सही, मिलकर एक तो हो सकेंगे।

[दुर्गादास का प्रवेश। सफीयतुन्निसा और महाराजा अजीत सिंह को पास-पास बैठे देखकर उनकी आँखें लाल हो उठती हैं किन्तु वह अपने क्रोध पर संयम रखते हैं।]

दुर्गादास — क्षमा कीजिए महाराज। मैं दो हृदयों के मधुर स्वप्न को नष्ट करने आ पहुँचा हूँ।

[सफीयतुन्निसा और अजीत सिंह उठ खड़े होते हैं।]

अजीत सिंह — आप आ गये दक्षिण से लौटकर? मुझे तो भय था कि सम्राट् औरंगजेब ने आपको बन्दी बनाने की अभिसन्धि की है।

दुर्गादास — दुर्गादास ने कच्ची कौड़ियाँ नहीं खेला है महाराज। औरंगजेब ने मुझे बन्दी बनाने और मार डालने की भी धमकी अवश्य दी लेकिन मैं अच्छी तरह जानता था कि इस समय सम्राट् को जीवित दुर्गादास की आवश्यकता है, मृत की नहीं।

सफीयतुन्निसा — किन्तु उन्होंने आप को मार डालने की धमकी क्यों दी?

दुर्गादास — क्यों कि मैंने तुम्हें और तुम्हारे भाई को सम्राट् औरंगजेब के हाथों में सौंपने से इनकार कर दिया।

सफीयतुन्निसा — क्यों? क्या आप समझते थे वह हमें प्राप्त करके मरवा डालेंगे?

दुर्गादास — नहीं, शाहजादी, औरंगजेब के अन्तःकरण में बसने वाला बधिक अन्तिम साँसें ले रहा है।

अजीत सिंह — और सम्भवतः सम्राट् भी जीवन की अन्तिम साँसें ही गिन रहे हैं।

दुर्गादास — मुझे तो ऐसा नहीं जान पड़ा। मृत्यु उन्हें अपना ग्रास बनाने

के लिए चल पड़ी है। ऐसा वह अनुभव अवश्य करने लगे हैं। फिर भी मैं समझता हूँ अभी वह जीवित रहेंगे। वह जीवन का जितना पथ पार कर चुके हैं उसे बार-बार मुड़-मुड़ कर देखते रहते हैं। उनके प्राणों में पश्चाताप की ज्वाला निरन्तर सुलगती रहती है जिससे वह प्रत्येक क्षण बेचैन रहते हैं। जीवन भर वह हिंसा में रत रहे और प्रेम की किरणों ने तो उनके हृदय को मानों स्पर्श ही नहीं किया, जैसे वह कोमल भावनाओं वाले मानव नहीं एक चलती फिरती पत्थर की प्रतिमा हों। अब यह पत्थर भीतर ही भीतर द्रवीभूत हो गया है। यद्यपि बाह्य रूप में वह अपने कठोर रूप को बनाये रखने के यत्न में हैं।

सफीयतुन्निसा हम उनके पास जायें तो वह हमें प्यार करेंगे।

दुर्गादास हाँ, जिस स्नेह के स्रोत को उन्होंने क्रूर राजनीति और धर्मान्धता की चट्टानों से रोक रखा था वह चट्टानों को तोड़ कर प्लावित होने के लिए आतुर है।

सफीयतुन्निसा तब आपने हमें उनके सुपुर्द करना क्यों अस्वीकार किया?

दुर्गादास इसलिए कि वह मुझसे सौदा करना चाहते थे।

अजीत सिंह सौदा की शर्तें क्या थीं।

दुर्गादास मुझे जागीर और मनसब।

सफीयतुन्निसा और महाराज को?

अजीत सिंह महाराजा से सौदा करने की आवश्यकता ही क्या? दुर्गादास जी को प्रसन्न करने से ही उनका काम बन सकता है। पूछ तो शक्ति की होती है। सम्पूर्ण मारवाड़ अपने रक्षक के चरणों में मस्तक नवाता है। राजा को भी उनके आगे मस्तक नवाना चाहिये।

दुर्गादास — सम्राट् औरंगजेब यदि ऐसा सोचें तो इसमें दुर्गादास का तो अपराध नहीं लेकिन दुर्गादास अपने कर्त्तव्य से च्युत नहीं हुआ। वह उनके सौदा करते समय अपने अन्नदाता को नहीं भूला। उसने स्पष्ट कहा, सम्राट् दुर्गादास से पहले आप मारवाड़ नरेश की बात सोचें, उन्हें आप कैसे संतुष्ट करेंगे !

अजीत सिंह — तब क्या कहा औरंगजेब ने ?

दुर्गादास — उन्होंने कहा, "उनको भी जागीर मनसब प्रदान करने में हमें प्रसन्नता होगी।"

अजीत सिंह — जोधपुर सहित हमारा सम्पूर्ण मारवाड़ वह हमें देने को प्रस्तुत नहीं है ?

सफीयतुन्निसा — तो आप मारवाड़ के बदले में मुझे सम्राट् के हाथों में सौंपने को प्रस्तुत हैं न ? क्या आप का वह सपना समाप्त हो गया जो कुछ क्षणों पहले आप देख रहे थे।

अजीत सिंह — मेरा यह तात्पर्य नहीं कि मैं आप को सम्राट् के सुपुर्द कर ही दूँगा मैं तो दुर्गादास जी से सम्राट् का अपने प्रति रुख जानना चाहता था।

दुर्गादास — आप का चाहे कुछ भी आशय रहा हो महाराजा, लेकिन दुर्गादास ने अन्तिम निर्णय कर लिया है कि वह शाहजादी को इनके परिवार में पहुँचा देगा। उसे कोई अधिकार नहीं कि इनके जीवन को डाल से टूटे हुए पत्ते की तरह निरुद्देश उड़ने दे।

अजीत सिंह — लेकिन इनका नया परिवार यहाँ बन सकता है।

दुर्गादास — नये परिवार से आप का क्या आशय है इसे मैं समझता हूँ। मैंने निश्चय किया था कि अभी शाहजादी और शाहजादे को

औरंगजेब के पास नहीं भेजूंगा जब तक कि मेरे राजा और मेरे मारवाड़ के साथ पूरा न्याय नहीं होता।

अजीत सिंह न्याय तो हमारी तलवार प्राप्त करेगी केवल अपने लिए न्याय प्राप्त करके ही सन्तुष्ट नहीं हो जायेगा अपितु वह शत्रु के अत्याचारों का भी न्याय करेगी।

दुर्गादास भगवान् आपको और मारवाड़ को इतनी शक्ति दे कि आप मारवाड़ के शत्रुओं का गर्व चूर कर सकें, लेकिन दुर्गादास शहजादी को सौदे की वस्तु बनाकर मित्रता और मानवता को कलंकित नहीं करेगा।

सफीयतुन्निसा मित्रता कैसी ?

दुर्गादास मित्रता दुर्गादास और तुम्हारे अब्बा की। तुम मेरे मित्र की पवित्र धरोहर हो मेरे पास। ईरान जाते समय उन्होंने मुझसे कहा था—"दुर्गादास जी, यदि मैं शीघ्र न लौट पाऊँ और बच्ची की आयु विवाह—योग्य हो जाये तो आप उसे अब्बा के पास पहुँचा देना। सम्राट् औरंगजेब भले नृशंसता का अवतार रहे हैं—फिर भी मैं अनुभव करता हूँ कि उनके हृदय के किसी न किसी कोने में मानवता जीवित है। उन्होंने दाराशिकोह के छोटे पुत्र सिपरशिकोह का विवाह अपनी पुत्री जुबदतुन्निसा से किया। मुरादबक्श के बेटे इजीदबक्श से अपनी पुत्री मेहरुन्निसा का विवाह किया। मुझे विश्वास है कि वह मेरी पुत्री से अच्छा ही व्यवहार करेगा।

अजीत सिंह औरंगजेब की यह मानवता केवल मुगल-राजवंश तक ही सीमित रह गयी। शाहीवंश में तो वह अपने शत्रु की सन्तान पर भी दया कर सकें लेकिन राठौरों के साथ तो यह किया कि अपने मित्र के भी पुत्रों की जान उन्होंने ली। एक मात्र

अजीत सिंह बचा है सो उसके प्राणों के ग्राहक अभी तक हैं।

दुर्गादास — किन्तु सच बात तो यह है महाराज, कि न तो महाराजा जसवंत सिंह ही औरंगजेब पर अपनी पूर्ण आस्था रख सकें, न औरंगजेब ही उन पर पूर्ण विश्वास। महाराजा जो अपने जीवन के अधिकांश भाग में मुगल-झंडे की छाया में मुगल-साम्राज्य के शत्रुओं से युद्ध करते रहे यह केवल परिस्थितियों की मजबूरी थी। कौन था जो, यदि वह विद्रोह का झंडा खड़ा करते तो, उनका साथ देता? औरंगजेब भी भली प्रकार जानते थे कि महाराज का हृदय अन्तर से विद्रोही है और इसीलिए बाह्य रूप में वह महाराजा के प्रति कृपालुता प्रदर्शित करते हुए भी उन्हें धीरे-धीरे समाप्त करने का यत्न करते रहे। महाराजा जसवंत सिंह जी, उनके परिवार और मारवाड़ के साथ जो निर्दयता औरंगजेब ने की है उसे मारवाड़ कभी नहीं भूलेगा।

अजीतसिंह — फिर भी आप शाहजादी को औरंगजेब के पास भेज देना चाहते हैं।

दुर्गादास — हाँ, भेज देना चाहता हूँ और भेजूँगा, क्यों कि शाहजादी के सम्मान की रक्षा करना राजपूत परम्पराओं के अनुकूल है। राजपूत शत्रु के परिवार की नारियों को उतनी ही प्रतिष्ठा करते हैं जितनी अपनी माँ-बहनों के सम्मान की। मुझे आज मारवाड़ में शाहजादी की प्रतिष्ठा सुरक्षित नहीं दिखायी देती।

अजीतसिंह — मैं उन्हें अपनी अर्धाङ्गिनी बनाना चाहता हूँ इसमें कैसी अप्रतिष्ठा है उनकी?

दुर्गादास निश्चित रूप से अप्रतिष्ठा हैं। यह आपके प्रेम का प्रथम उद्दाम आवेग है जो क्षणिक है। इसे शाहजादी अपने—प्रति आपका अटूट प्रेम समझ लें तो मैं कहूँगा वह भयंकर भूल करेंगी। महाराजा आप अपनी पूर्व-पीढ़ियों के व्यक्तिगत जीवन को देखें। वे चाहे रणभूमि में महाकाल का अवतार रहे हों लेकिन उनके जीवन का काला पहलू भी रहा है। अपनी जीवन-संगिनियों के प्रति उनका क्या व्यवहार रहा है? एक के बाद अनेक विवाह वे करते रहे, उसके पश्चात् भी पासवान, पड़दायतों और गायनों की एक भीड़ उनकी सेवा के लिए आवश्यक समझी जाती रही है। स्वयं आपके पिता श्री ने ग्यारह विवाह किये, इन ग्यारह रानियों के अतिरिक्त पासवान, पड़दायतों और गायनों की संख्या कितनी थी आप जानते है? ऐसी स्थिति में महाराजा का दाम्पत्य जीवन क्या हो सकता था उसे भी आप समझ सकते हैं। एक महाराजा की पत्नी बनने से बड़ा अभिशाप किसी नारी के लिए और क्या हो सकता है।

अजीत सिंह आपको राठौर राजपुरुषों की निन्दा करने का कोई अधिकार नहीं है।

दुर्गादास मैं शाहजादी को वस्तुस्थिति से परिचित करा दूँ, यह मेरा कर्त्तव्य है। आज मैं ही उनकी माँ हूँ, मैं ही पिता हूँ। उनके हित-अनहित की चिन्ता करना मेरा कर्त्तव्य है। मुगल-शाहजादी यदि वास्तविक अर्थों में मारवाड़ की पटरानी बनायी जा सकें तो मैं इनके अब्बा की अनुमति प्राप्त करने ईरान जा सकता हूँ किन्तु महाराजा यह असम्भव है। दुर्गादास की बात छोड़ भी दी जाये तो भी मैं जानता हूँ कि मारवाड़ में एक भी राठौर ऐसा नहीं है जो आपका समर्थन करे। आपकी इच्छा को कार्यरूप में परिणत करने का परिणाम होगा भयानक गृह-

कलह। आपके क्षणिक आवेग के लिए एक ओर तो इस कुसुम-समान कोमल कन्या का जीवन भावी असम्मान की ज्वाला में झोंक दिया जायेगा और दूसरी ओर राठौरों में कलह का सूत्रपात कर मारवाड़ के पुनरुद्धार का मार्ग अवरुद्ध हो जायेगा, यह दुर्गादास के जीते जी नहीं होगा—कभी नहीं होगा !

अजीत सिंह किन्तु राठौर राजवंश हठ का पक्का रहा है, अजीत सिंह अपने निश्चय को नहीं बदल सकता—नहीं बदल सकता। राजनीति, राजगद्दी का मोह अथवा राजपूतों का झूठा अहं दो हृदयों के स्वाभाविक मिलन को नहीं रोक सकते। मुझे राजगद्दी नहीं चाहिए, सफीयतुन्निसा चाहिए। चलो, सफीयत, मेरे साथ चलो ?

[अजीत सिंह सफ़ीयतुन्निसा का हाथ पकड़कर उसे अपने साथ ले जाना चाहता है लेकिन सफीयत अपने स्थान से टस से मस नहीं होती।]

सफीयतुन्निसा शान्त, महाराज, प्रेम केवल भोग की ही माँग नहीं करता, वह त्याग और बलिदान भी चाहता है। सफीयतुन्निसा ने जब मन ही मन एक बार आपको अपना मान लिया तो वह जीवन भर आपकी ही है लेकिन वह सम्पूर्ण मारवाड़ की आशाओं को धूल में मिलाने का कारण बने, आपको भी राजगद्दी से उतार कर मार्ग का भिखारी बना दे, ऐसा अपराध वह नहीं करेगी।

अजीत सिंह तुम मेरे साथ नहीं चलोगी तो मुझे बल-प्रयोग करना पड़ेगा।

दुर्गादास दुर्गादास की उपस्थिति में नारी पर अत्याचार नहीं हो सकता महाराज ! राजपूतों के उज्ज्वल यश पर कलंक मत लगाओ !

युद्ध-काल में शत्रु-सेना के उद्धत सैनिकों ने अनेक बार मारवाड़ की सती नारियों का अपमान करने का यत्न किया है, वहाँ राठौरों की तलवारें उनकी रक्षा करने पहुँची हैं लेकिन कभी प्रतिशोध की भावना से पागल होकर शत्रुओं की नारियों का अपमान राठौरों ने नहीं किया। नारी तो नारी है—माँ है बेटी है, बहन है, उसने शत्रु के घर में जन्म लिया है या मित्र के घर में, किसी भी धर्म के माननेवाले के घर में—प्राणों के मोल पर उसके सम्मान की रक्षा करना राजपूत की आन रही है। और इस आन की राजपूत रक्षा करेगा।

अजीत सिंह राजपूती आन की बात मत करो, दुर्गादासजी, आप शाहजादी को औरंगजेब के हाथों में सौंपकर उनकी कृपा अर्जित करना चाहते हैं।

दुर्गादास अपनी जबान पर रोक लगाओ महाराज! मेरे हृदय में भी वही रक्त है जो आपके हृदय में। यह भी उत्तेजित होना जानता है। औरंगजेब की कृपा की दुर्गादास ने अनेक बार ठोकरें मारी हैं। वह चाहता तो औरंगजेब की कृपा नहीं अपने बाहु-बल से ही मारवाड़ का स्वामी बन सकता था।

अजीत सिंह वह तो आप कभी के बन चुके होते, यदि अपने स्वामी के प्रति राठौरों की श्रद्धा इसमें बाधक न होती। आज भी आप चाहते क्या हैं, यही कि आप मारवाड़ के वास्तविक प्रभु बन कर रहें, अजीत सिंह आपका आज्ञाकारी सेवक बनकर रहे।

दुर्गादास महाराजा यदि यही समझते हैं तो दुर्गादास मारवाड़ से अपना मुँह काला कर चला जायेगा। मारवाड़ का कठिन समय समाप्त हो चुका है। मुगल-साम्राज्य का अवशेष दबदबा औरंगजेब के जीवन-काल तक ही सीमित है। उनके आँखें मूँदते ही

आप जोधपुर पर मारवाड़ का पंचरंगी झंडा फहरा सकते हैं। दुर्गादास के मारवाड़ से चले जाने से किसी का कुछ नहीं बिगड़ेगा।

[मुकुन्ददास खीची का प्रवेश]

मुकुन्ददास मारवाड़ाधिपति राठौर कुलावतंस महाराजा अजीत सिंह को मुकुन्ददास जुहार करता है।

अजीतसिंह क्या कहना चाहते हो मुकुन्ददास जी !

मुकुन्ददास मेवाड़ के राजदूत उदयपुर से आये हैं।

दुर्गादास मैं जानता हूँ वह आनेवाले थे।

अजीतसिंह यह और क्या षड्यंत्र है ?

दुर्गादास यह षड्यंत्र नहीं है महाराज ! मेवाड़ और मारवाड़ जो महाराणा राज सिंह के स्वर्गवास के पश्चात् बिछुड़ गये थे, उन्हें फिर से मिलाने का प्रयत्न है, जिससे कि मारवाड़ाधिपति की शक्ति में वृद्धि हो सके।

अजीतसिंह किस प्रकार ?

दुर्गादास मेवाड़ की राजकुमारी से मारवाड़ के महाराजा का विवाह सम्पन्न होने से। मेवाड़ के राजदूत सगाई का टीका लेकर आये हैं।

अजीत सिंह महाराणा जी से चर्चा करने के पूर्व मुझसे पूछना तो आवश्यक था दुर्गादास जी ! इस समय मेवाड़ के सगाई का टीका मँगाना सरासर आपका षड्यंत्र है, शाहजादी के मन में मुझसे घृणा उत्पन्न करने का एक उपाय है।

सफीयतुन्निसा किन्तु महाराज ! आपके प्रति घृणा और अविश्वास सफीयत के मन में कभी स्थान नहीं पायेगा। आपके हृदय में कुछ क्षणों

के लिए सफीयत ने स्थान पाया था, इसी की स्मृति के सहारे वह शेष जीवन के सूने क्षण काट देगी। मैं जानती हूँ, राजपूत परम्पराओं के अनुसार किसी कन्या का टीका वापस नहीं किया जाता, इसलिए आप चाहें या न चाहें यह विवाह तो होगा ही और होना ही चाहिए। अब एक ही प्रार्थना आपसे मेरी है कि इस सफीयत को आप भूल जाना। मैं आपकी विवशताओं को जानती थी, अपनी सीमाओं को भी जानती थी लेकिन इसमें आपकी और मारवाड़ की हानि न होती तो मैं अपनी सीमाएँ भी लांघ जाती। क्या होता जो बूढ़े औरंगजेब को शाही राजवंश की प्रतिष्ठा जाती नजर आती? लेकिन मैं जानती हूँ, ये प्रतिष्ठाएँ मनुष्य की बनाई हुई दीवारें हैं; एक दिन इन्हें गिराना होगा। फिर भी मैं आपको आपके मारवाड़ से छीनने का पाप नहीं कर सकती।

[इसी समय बुलंद अख्तर और कासिमखाँ एक पालकी के साथ आते हैं। चार कहार इस पालकी को उठाये हुए है जो पालकी को लाकर रखते है।]

अजीत सिंह — यह पालकी किसने मँगवायी है?

दुर्गादास — सेवक ने। शाहजादी को अभी भेजना जो है।

अजीत सिंह — यह सब मैं क्या देख रहा हूँ? यह मेरा मारवाड़ है। यहाँ किसी काम में अजीत सिंह की सम्मति लेने की आवश्यकता नहीं समझी जाती। दुर्गादास जी, आपको इतने लोगों के प्राण लुटाकर मुझे बचाने की क्या आवश्यकता थी, आप मेरा बचपन में ही गला घोंट देते। जवान होने पर पग-पग पर मुझे अपमान तो न सहना पड़ता।

दुर्गादास — महाराज, आज स्वामी के ही हित के लिए आपके सेवक को उनकी इच्छा के प्रतिकूल कार्य करना पड़ा है। आप मेरे पुत्र

के समान हैं, पुत्र जब बीमार होता है और अहितकर वस्तु खाना चाहता है तो माँ-बाप उसे रोकते हैं। बच्चा इसे माँ-बाप की निर्ममता समझता है लेकिन सच्चे स्नेही को कभी-कभी कठोर भी होना पड़ता है। प्रेम के उन्माद में महाराजा राजपूती आन को भूल गये हैं लेकिन दुर्गादास तो आन का मान रखना नहीं भूला है। औरंगजेब हमारे शत्रु हैं और जब तक मारवाड़ की एक गज भूमि भी उनके अधिकार में है वह हमारे शत्रु रहेंगे लेकिन उनके परिवार की एक कुमारी चिरकाल तक हमारे बन्धन में रहे यह मानवता के विरुद्ध है महाराज! (सफीयतुन्निसा से) बैठो बेटी, डोली में।

सफीयतुन्निसा इसी प्रकार। साथ में......

दुर्गादास वह सब प्रबन्ध कर दिया है। शाहजादी, शाहजादी की भाँति ही जायगी।

सफीयतुन्निसा (बुलंद अख्तर से) और आप भाईजान।

बुलंद अख्तर पहले तुम अब्बा के पास पहुँचो। वहाँ पहुँचकर अब्बा की वर्तमान काल की एक तस्वीर मेरे पास भेजना। उसे देखकर सोचूँगा कि जो तस्वीर आज तक उनकी देखता रहा हूँ उसमें कितना परिवर्तन हुआ है? तब उनके पास जाने न जाने का निर्णय करूँगा। बैठो पालकी में।

[सफीयतुन्निसा दुर्गादास के पाँव छूती है। उसकी आँखों में आँसू आ जाते हैं जो दुर्गादास के पाँवों पर गिरते हैं। दुर्गादास उसे सीधा खड़ा करते हैं और सिर पर हाथ रखते हैं। उनकी आँखों में भी आँसू आ जाते हैं।]

दुर्गादास दुर्गादास ने अपने बेटों की मृत्यु पर भी आँसू नहीं बहाये लेकिन आज इस पत्थरहृदय-राजपूत का हृदय भी बहा जाता है।

मैं नहीं जानता था कि मैं तुम्हें इतना प्यार करने लगा हूँ। मैं कितना निर्दयी हूँ बेटी, मैंने तुम्हारे भोले हृदय के निश्छल प्यार का गला घोंट डाला। लेकिन बेटी, मनुष्य चारों तरफ से बँधा हुआ है। वह प्यार करने के लिए भी स्वतन्त्र नहीं है। तुम समझदार हो, तुमने मेरी स्थिति को समझ लिया है लेकिन महाराजा अभी तक नहीं समझ पाये हैं। खैर, समय उन्हें समझा देगा। बैठो पालकी में।

[सफीयतुन्निसा अजीत सिंह के पास जाती है।]

सफीयतुन्निसा — महाराज, मुझे हँसते-हँसते विदा दीजिए। मुझे क्षमा करें, मैं आपका दिल तोड़ कर जा रही हूँ लेकिन विश्वास रखो, यह मेरा प्रथम और अन्तिम प्यार था।

[अजीत सिंह पत्थर की प्रतिमा की भाँति मूक और निश्चल खड़ा रहता है।]

सफीयतुन्निसा — अच्छी बात है आप मुझे क्षमा नहीं करेंगे। मैं चाहती थी, मैं हलके मन से यात्रा कर सकूँ। लेकिन क्या करूँ आप चाहते हैं कि मुझे जीवन भर शान्ति न मिले तो आपकी ही इच्छा पूर्ण हो।

[सफीयतुन्निसा पालकी में बैठती है। कहार पालकी उठाते हैं। एक कहार को दुर्गादास हटा कर स्वयं उसकी जगह लग जाते हैं।]

सफीयतुन्निसा — आप यह क्या कर रहे हैं दुर्गादास जी ?

बुलंद अख्तर — बेटी, शान्ति के क्षण मुझे थोड़े ही मिले हैं लेकिन जब मिले हैं तब मैं तुम्हें अपने कंधों पर बिठा कर घूमने में आनन्द पाता रहा हूँ। वह आनन्द युद्ध-भूमि में खोये हुए सारे घावों पर मरहम लगा देता था। बेटी, अब तुम्हें देखने का अवसर भी न पा सकूँगा, इसीलिए थोड़ी देर अपने कंधे पर तुम्हें ले जा कर जीवन का अन्तिम आनन्द लूट लेना चाहता हूँ।

[कहार आगे बढ़ते हैं। अजीत सिंह उन्मत्त होकर अपनी तलवार निकालते हैं।]

अजीत सिंह मैं अपने जीते जी तुम्हें नहीं जाने दूँगा। मैं तुम्हें पाने के लिए सारे संसार से युद्ध करूँगा। मेरी आँखों के सामने से तुम्हें कोई नहीं ले जा सकेगा।

[कासिम खाँ और मुकुन्ददास अजीत सिंह को पकड़ते हैं। पालकी रुकती है।]

दुर्गादास जी, अब मारवाड़ में आप रहेंगे या मैं रहूँगा।

दुर्गादास आप ही रहेंगे महाराज ! दुर्गादास तो सेवक मात्र है उसने चाकरी निभा दी। युद्ध-क्षेत्रों में शरीर के घाव और आज यह हृदय का घाव, यही उसकी सेवाओं का पुरस्कार है। वह जाता है और मारवाड़ को यदि दुर्गादास के प्राणों की आवश्यकता हुई तो वह लौट कर आयेगा। अपनी जन्मभूमि को मैं अन्तिम प्रणाम करता हूँ।

मुकुन्ददास ऐसा न कहिए दुर्गादास जी ! मारवाड़ इतना निठुर नहीं है कि आपको बिदा कर दे। महाराजा शान्त हो जायेंगे और तब आपको मना लाने के लिए व्याकुल होंगे।

[पालकी बढ़ती है]

बुलंद अख्तर खुदा हाफिज, सफीयत ! बाबाजान की नयी तस्वीर भेजना न भूलना।

[पटाक्षेप]